गरियाहाट के पुल पर वे दोनों

गरियाहाट के पुल पर वे दोनों

गौरकिशोर घोष

हिन्दी रूपान्तर
अमल मजुमदार



राधाकृष्ण

अरुणकुमार सरकार
वीरेन्द्रनाथ चक्रवर्ती
अपने दो प्रिय कवि एवं मित्रों को ।

क्रम

प्रस्तावना... 9
वह और उसका संसार... 13
केया और उसके वर्तमान का एक टुकड़ा... 20
पत्नी के निकट उसकी माँगों की सूची... 22
उसकी एक क्षण की स्वगतोक्ति... 24
मीनू, लाल सिग्नल और उसका घरौंदा... 24
लाल सिग्नल के प्रति मीनू की स्वगतोक्ति... 28
पुल के ऊपर वे दोनों... 30
यज्ञेश्वर का राजसूय और उसकी वर्ग-चेतना (उसकी जबानी)... 32
एक मनोरंजक नाटक और उसके पात्र... 36
बाद की पंगत की उम्मीद में वे और बहुत-से लोग... 37
लाल सिग्नल के प्रति मीनू की स्वगतोक्ति... 43
उस दिन के नाटक में मीनू और दूसरे लोग... 44
उस दिन के भोज में उसकी कुछ सुखद जानकारी... 48
शादी के घर आने के पहले शची का संकल्प... 53
केया और उसका (मन-ही-मन) कथोपकथन... 56
पुल के ऊपर दोनों : गृहस्थी की चिन्ता... 57
उसके पागलपन की लम्बी कैफियत... 60
मीनू की तत्कालीन अस्तव्यस्तता... 66
यज्ञेश्वर की निजी समस्या... 74

वह और केया : सभा-मंच पर... 77
मृत ससुर के साथ उसका कथोपकथन... 84
बादलों के बेड़े पर वह और मीनू... 86
उसकी एक क्षण की स्वगतोक्ति... 90
समाज की जटिलता... 90
हैवलॉक एलिस, कामसूत्र और मार्क्स : क्या राह ?... 92
यज्ञेश्वर की यौन-शिक्षा...101
पुल पर वह, मीनू और वे...103
शची की शेष बात : एक अपनी तसवीर...106
गरियाहाट के पुल पर वे दोनों...115
मीनू का छोटा-सा प्रश्न...118
और वे भी हिले...118
एक अत्यन्त करुण नाटक का अन्तिम दृश्य...119
मीनू को कई ज़रूरी उपदेश...120
शोक-यात्रा का विवरण...125
उसी रात क्या हुआ ?...126
उपसंहार...133

प्रस्तावना

आँखें खोलते ही मुझे लगा कि मुझे कोई कष्ट नहीं है। सारा शरीर सहसा ताजा और हलका हो आया था। खुली हुई खिड़की से बाहर की ओर दृष्टि गयी। एक दिव्य प्रकाश की आभा से सारा कुछ बहुत ही सुन्दर लगा। धीमी हवा बह रही थी जो न तो ठंडी थी और न गरम। तरह-तरह के रंगों के फूल खिले थे। पक्षियों को भी आज कोई कष्ट नहीं था। उनके चहचहाने के साथ मेरे स्नायु-तंत्र ऐसी आश्चर्यजनक सीमा तक एकात्म हो रहे थे कि लग रहा था कि मैं इसका अभ्यस्त हूँ। लेटे रहने की जरा भी इच्छा न हुई। लगता था कि अभी जन्म लिया हो—इस तरह का हलका और ताजा शरीर लेकर मैंने उस दिव्य प्रकाश के प्रवाहित पथ पर निकल पड़ना चाहा।

उसी समय मानो कोई बोला, 'तुम फिर लौटोगे नहीं ?'

मैं आश्चर्य में पड़ गया, 'कहाँ ?'

वह बोला, 'क्यों, अपने में ?'

मैं जब तक उत्तर दूँ कि युधिष्ठिर बोले, 'पितामह, दैव और पुरुषार्थ—इन दोनों में कौन श्रेष्ठ है ?'

'श् श् श्!' कहीं कोई मूर्ख की तरह बोल उठे और उनके कथोपकथन में विघ्न न पड़े, इसीलिए ओंठों पर उँगली लगाकर अस्फुट शब्द उच्चारण कर मैंने चुप रहने को कहा। इस मौलिक प्रश्न का उपयुक्त उत्तर सुनने की उत्तेजना में मेरा कलेजा थरथर काँपने लगा था।

भीष्म बोले, 'इस सम्बन्ध में संसार के पितामह ब्रह्मा ने वसिष्ठ से जो कहा था, वह सुनो : कृषक अपने खेत में जैसा बीज डालता है वैसा ही फल उत्पन्न होता है; मनुष्य भी अपने सत्कर्म और असत्कर्म के अनुसार विभिन्न फल प्राप्त करता है। जैसे खेत के बाहर फल पैदा नहीं होता, पुरुषार्थ के बिना वैसे ही दैव भी सिद्ध नहीं होता।'

सामने नहीं देखा, कब मानो कितने क्रुद्ध चेहरों ने मुझे चारों ओर से घेर लिया है। उनके कर्कश कोलाहल में मुझे डर लगा, शेष बात शायद सुन ही नहीं पाऊँगा।

आश्चर्य से बोल उठा, 'ये कौन हैं ?'

मानो कोई बोल उठा हो, 'वे हमारे ही आत्मज हैं।'

मैं बोला, 'वह क्या ? मैं तो उन्हें नहीं पहचानता।'

वह बोला, 'दूर हैं, इसीलिए अपरिचित लगते हैं। पास आने पर बिलकुल जान जाओगे।'

'श् श् श् !' फिर चुप रहने को कहा।

भीष्म बोले, 'पंडित लोग पुरुषार्थ की खेत से और दैव की बीज से तुलना करते हैं। जिस प्रकार खेत और बीज का संयोग है, उसी प्रकार पुरुषार्थ और दैव के संयोग से फल उत्पन्न होता है। क्लीव पति के साथ जिस प्रकार पत्नी का सहवास निष्फल होता है, कर्म का त्याग कर दैव पर निर्भर करना उसी प्रकार है।'

वही क्रुद्ध चेहरे इस तरह चीख-चीखकर ताल-ताल पर इस प्रकार आवाजें लगाने लगे कि सचमुच लगा कि मैं और कुछ न सुन सकूँगा। मेरे स्नायु ! मेरे स्नायु ! अब मुझे डर लगा कि इस चिल्लाहट से अवसन्न हो जायेंगे—क्रमशः जड़ हो जायेंगे।

'हा ईश्वर !' मैं आर्तस्वर से चिल्ला पड़ा, 'क्या कोई नहीं है जो इन लोगों को रोक दे ?'

मेरे आर्तस्वर का अनुकरण कर मानो कोई बोल उठा, 'कोई नहीं, कोई नही।'

विस्मित होकर मैं बोला, 'लेकिन ये चीख क्यों रहे हैं?'

वह बोला, 'ये लोग ये सब बातें सुनना नहीं चाहते, इसीलिए।'

मैं क्लान्त होकर बोला, 'लेकिन मैं तो सुनना चाहता हूँ। सुनो, सुनो, तुम्हें तो ये बातें सुनाने के लिए किसी ने बुलाया नहीं। तुम शोर क्यों कर रहे हो?'

इस बात को सुनकर वे लोग जोरों से ठठाकर हँसने लगे।

'श् श् श्!' 'श् श् श्!'

भीष्म बोले, 'पुरुषार्थ द्वारा ही लोग स्वर्ग, भोग्य विषय और पाण्डित्य की प्राप्ति करते हैं।'

'हा-हा! हा-हा-हा! हा-हा!'

जोरों की हँसी के आघात से कानों को बन्द कर लेने की इच्छा हुई।

भीष्म बोले, 'कृपण, क्लीव, निष्क्रिय, अकर्मण्य, दुर्बल और यत्नहीन लोगों को अर्थ की प्राप्ति नहीं होती।'

'हा-हा-हा-हा-हा!'

भीष्म बोले, 'पुरुषार्थ का अवलंबन कर कर्म करने पर दैव उसका सहायक होता है, किन्तु केवल दैव से कुछ भी नहीं मिलता।'

उन क्रुद्ध चेहरे वालों ने ईंटें फेंकना शुरू किया।

मैं आतंकित होकर केवल एक शब्द बोला, 'यह क्या! यह क्या?'

मानो किसी ने कहा, 'हम सब-कुछ तोड़ डालेंगे।'

धीरे-धीरे फिर अँधेरा घिर आया। पक्षियों का गान भयार्त चीत्कार में मिल गया। मेरा शरीर फिर जीर्ण हो गया। कष्ट में पड़ गया। मेरी जीभ फीकी-सी लगने लगी। मेरे स्नायु ! मेरे स्नायु !

वह बोला, 'हाय, कलकत्ता में कोई भी दिव्य प्रभात स्थायी नहीं होता। यहाँ सब क्षण ही अनिश्चित होते हैं, और अस्थिर !'

धीरे-धीरे फिर अँधेरा घिर आया। पक्षियों का गान भयार्त चीत्कार में मिल गया। मेरा शरीर फिर जीर्ण हो गया। कष्ट में पड़ गया। मेरी जीभ फीकी-सी लगने लगी। मेरे स्नायु ! मेरे स्नायु !

वह बोला, 'हाय, कलकत्ता में कोई भी दिव्य प्रभात स्थायी नहीं होता। यहां सब क्षण ही अनिश्चित होते हैं, और अस्थिर !'

वह और उसका संसार

वे शादी के घर से लौटे थे—वह और उसकी पत्नी।

'एक टैक्सी कर लें!' उसकी पत्नी ने बड़े अनुरोध से कहा, 'इतना लम्बा रास्ता बस की इस भीड़ में—सचमुच आजकल बड़ी थकान लगती है।'

'वाह! अभी तो शची ने इतना अनुरोध किया। तुमने कहा कि तुम छुटकी के घर होकर जाओगी?' वह सचमुच ताज्जुब में आकर अपनी पत्नी के चेहरे की ओर देखता रह गया।

'वाह रे! तुम्हारे दोस्त की गाड़ी पर मैं क्यों चढ़ूँगी? उससे तो बस की भीड़ में धक्के खाना कहीं अच्छा है। अपनी गाड़ी खरीदने की जिनकी हैसियत न हो तो उन्हें दूसरे की गाड़ी पर चढ़कर बड़ा आदमी न बनना ही अच्छा है। ये सब ठाठ तब अच्छे नहीं लगते।'

उसका दिमाग़ गरम हो गया। बड़ी मुश्किल से अपने को संयत किया। 'शची मेरे आगे कभी शेख़ी नहीं बघारता। क्यों, मालूम है? एक तो हम बहुत पुराने दोस्त और सहकर्मी हैं, फिर मैं कभी...।'

'तुम्हारे बहुत दिनों के दोस्त की सहधर्मिणी तुम्हारी कितने दिनों की दोस्त है?'

'क्या? क्यों?'

चाल-ढाल देखकर तो लगता है कि कभी बहुत घनिष्ठ रही होगी। बाप रे, क्या ढंग हैं! दोनों इस तरह बातों में मस्त थे कि बाहर की ओर

किसी दूसरे की तरफ़ ध्यान ही न था। बाप रे बाप !

'टैं-क्-सी ! अरे, जल्दी बढ़ चलो। ए टैक्सी, श्याम बाज़ार चलोगे ?'
टैक्सीवाला निर्विकार रहा। उसने कोई जवाब न दिया।
वह बोला—'क्यों, जायेगा ?'
कोई उत्तर नहीं।

ऐसे अवसरों पर उसका दिमाग़ गरम हो जाता और उसके मन में इस तरह के विचार क्षण-भर में उठने लगते, जैसे : (क) रिवॉल्वर की एक गोली से टैक्सी का टायर पंक्चर कर दो। महँगाई के इन दिनों में दो टायर ख़रीदने जाकर बच्चू को होश आ जायेगा कि पैसेंजरों के साथ ऐसे व्यवहार का नतीजा क्या होता है; (ख) एक गुप्त समिति का गठन करो—'बस-टैक्सी-ट्राम-यात्री बांधव समिति'। टैक्सी-स्टैंड पर, बस और ट्राम के हर स्टॉप पर समिति के सदस्य हमले के लिए खड़े रहेंगे। बस यदि स्टॉप पर न ठहरे, ओवरटेक करके चली जाये, या उतरने के लिए पूरा मौक़ा न दे, या कंडक्टर यात्रियों के साथ बुरा व्यवहार करे तो साथ-ही-साथ गुप्त अस्त्र के प्रयोग से उसका पहिया पंक्चर कर दो। नो अपील, नो आर्गुमेंट। या टैक्सीवाला अगर...।

'टैक्सी ! टैक्सी !'

वह भागकर उधर के फ़ुटपाथ पर गया। टैक्सी रुकी। ड्राइवर एक तगड़े सरदार जी थे। उसने दरवाज़ा खोलते-खोलते अपनी पत्नी को पुकारा। पत्नी जब प्राय: पहुंच गयी थी तो हांफ रही थी, तभी ड्राइवर ने पूछा, 'ओजी, कित्थे जाणा ?'
उसने जवाब दिया—'श्याम बाज़ार से थोड़ा आगे।'
भर्र से टैक्सी बढ़ के चली गयी।

उसकी पत्नी ने पूछा—'क्या हुआ, चली गयी ?'

'और नहीं तो क्या ?' इस बार उसकी पत्नी की थोड़ी देर पहले की खुले दिल की हँसी तलवार की धार की तरह तेज़ हो गयी। 'मैं तो खड़े-खड़े देख रही थी। मुझे तो लगा कि तुम ड्राइवर के पास जाकर हाथ जोड़ रहे हो। तुम्हारे इस स्वभाव के कारण ही कोई तुम्हें पूछता नहीं। मेरे साथ ही बहुत उछल-कूद करते हो।'

इस बार वह सचमुच डर गया। जानता था कि उसकी पत्नी ने इस बार सही भेद पा लिया है। इस बार उसकी नाक में नकेल डालकर उसे चिर-अभियोग के चूर-चूर कर देने वाले गहरे गड्ढे में ले जायेगी, जहाँ वह केवल चक्कर काटता रहेगा—बाहर निकलने का रास्ता उसे सूझेगा ही नहीं।

'मीनू ! बस, बस ! रोक के, ए बस, रोक के ! रोक के !'

बड़े जोश के साथ उसने और उसकी पत्नी ने फिर रास्ते के उस पार दौड़ लगायी। 'रोक के, रोक के, रोक के !' वह इधर-उधर का होश छोड़कर बस के पीछे बेतहाशा भागा। 'ए रोक के, रोक के, रोक के !' वह अब खुशामद नहीं, सिंहनाद करने लगा।

बस रुकी नहीं। भीड़ में शुरू से आखिर तक भरी बस ने रुकने-रुकने को होकर उसे कुछ दूर बेदम करके दौड़ाया। फिर ऐसा महसूस हुआ कि उसका कलेजा फटकर चार टुकड़े हो जायेगा। उसकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया। लड़खड़ाने लगा। उसकी छाती और सिर में धक्-धक् की आवाज उठने लगी। और पसीना ! अविरल पसीना धाराधार बहने लगा। उसने मन-ही-मन आर्तस्वर में पुकारा, 'मीनू, कहाँ हो तुम ? मैं मर रहा हूँ। मरा जा रहा हूँ, मेरे पास आओ।'

उसकी पत्नी ने फौरन उसका चश्मा उतार लिया। वह भी हाँफ रही थी। उसकी भी पीठ और कमर असह्य पीड़ा से फटे जा रहे थे। किन्तु वह अपनी पीड़ा की ओर ध्यान नहीं दे रही थी। आँचल से उसका मुँह पोंछ रही थी। वह अभी तक बड़ी उत्तेजित थी।

'तुम क्या पागल हो गये हो ? पागल हो गये हो ?' उसकी पत्नी के कड़े स्वर में ममता थी; उनकी पत्नी की आँखों और मुँह पर ममता थी; उसकी पत्नी की उँगलियों के हर स्पर्श से अब निर्मल ममता झरी पड़ रही थी। 'तुम्हें पता नहीं है कि तुम्हें उछल-कूद करना मना है ? तुम्हें पता नहीं है, तुम पर कैसी मुसीबत आ सकती है ? अभी ही आ सकती थी ?' उसकी पत्नी उत्तेजना में बड़बड़ा रही थी और बीच-बीच में आँचल से उसे हवा कर रही थी, उसका पसीना पोंछ रही थी।

'ज़रा बैठोगे ? मेरे शरीर से टेक लगाकर थोड़ा आराम कर लो। अब थोड़ा आराम मिल रहा है न ? पानी पिओगे ?'

छाती और सिर में तेज़ ऐंठन के कारण उसके मुँह से बात नहीं निकल रही थी। फिर भी वह चाहता था कि उसे अपनी अन्तिम बात सुना ही डाले। मुँह से कुछ न कह सका। इसीलिए मन-ही-मन बोला—मेरा व्यक्तित्व है या नहीं, यह कोई बात नहीं, मेरी धारणा है कि मेरा व्यक्तित्व है, वास्तव में था, लेकिन मीनू, यह कलकत्ता शहर है, यह भूलने से काम नहीं चलेगा। यहाँ, इस शहर में आजकल जो हालत है, उसमें टैक्सी-ड्राइवर या बस-ड्राइवर को अगर तुम मेरे व्यक्तित्व की परख की कसौटी कहो तो भूल करोगी। कम-से-कम मैं यही समझता हूँ।

यह बातें मन-ही-मन कहने के बाद ही उसने एक डकार लिया, और उसके बाद ही एक और। और आश्चर्य है कि साथ-ही-साथ उसे लगा कि उसका कलेजा बहुत खाली और शरीर हलका हो गया।

देखा, उसकी पत्नी उसी रास्ते पर खड़ी लाज-शरम भूलकर अपनी मक़ली रेशम की साड़ी के लिजलिजे (क्योंकि उस समय उसके ही पसीने से साड़ी का पल्ला लिजलिजा हो गया था) आँचल से उसका मुँह और गला पोंछ रही है, गाय जिस तरह अपने बछड़े के शरीर को चाटती है। और रास्ते के इधर और उधर यह रमणीय दृश्य देखने के लिए कुछ लोग जमा हो गये हैं।

हो !'

उसके स्वाभाविक स्वर से उसकी पत्नी का मुखमंडल तुरन्त एक दिव्य आभा से दीप्त हो गया।

'अब कुछ अच्छा लग रहा है ? पानी पिओगे ? ज़रा बैठोगे ?'

उसने एक और डकार लिया। अब कुछ और आराम मिला।

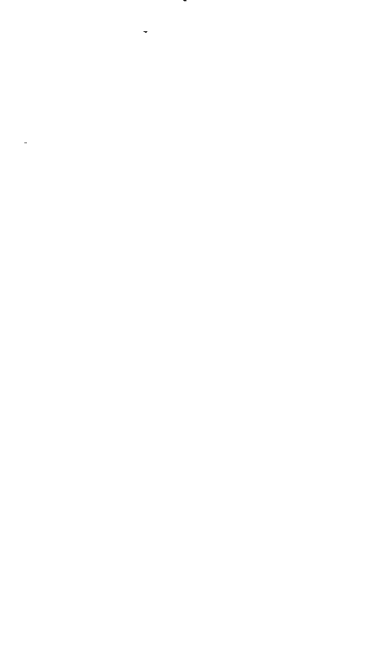
मुझे बस के पीछे इस तरह भागना नहीं चाहिए था—अपनी पत्नी की भर्त्सना से उसने सोचा।

उसने सोचा : (ग) गुप्त-समिति के सदस्यों के पास एक छोटा लेकिन शक्तिशाली क्षेपणास्त्र रहेगा। जो बस यात्रियों के आकुल आवेदन को अग्राह्य कर इसी तरह निकल जाना चाहेगी, तो सदस्य लोग फ़ौरन अचूक निशाने पर उस क्षेपणास्त्र की मार्फ़त चुम्बक का एक कड़ा बस के पीछे के बम्पर पर फेंकेगा। वह कड़ा मजबूत इस्पात के तार से जुड़ा रहेगा और इस तार का दूसरा हिस्सा खूंटे से बँधा रहेगा। परिणाम-स्वरूप किसी भी बस का इस तरह प्रतीक्षा कर रहे यात्रियों की उपेक्षा कर निकल जाना सम्भव न होगा। गुप्त-समिति के सदस्य-गण इसके बाद मन की मौज के लिए पिस्तौल छोड़कर बस के टायरों को भी पंक्चर कर सकते हैं।

उसकी पत्नी जो अब उसका शरीर पोंछ नहीं रही थी, बोली, 'बीच-बीच में तुम पर यह क्या भूत सवार हो जाता है ! पानी पिओगे ? सोडा पी लो न !'

वह सोच रहा है : टैक्सी के लिए भी वैसी ही व्यवस्था चाहिए। एक-मात्र इन्हीं उपायों से कलकत्ता की बसों, टैक्सियों और ट्रामों को कर्तव्य-परायण बनाया जा सकता है।

उसकी पत्नी बोली, 'शरीर अच्छा नहीं लग रहा है ? सोडा ले आऊँ ?'



आये। हँसते रहते ही क्यों लगता है कि उम्र कुछ कम हो गयी है ?

उसके बाद वे लोग धीरे-धीरे पुल पर चढ़ने लगे, पास-ही-पास। दोनों के पुराने शरीर ! फिर भी कभी-कभी यों लगता है कि इसी बीच कहीं अन-खोजा, अनदेखा ऐसा स्थान रह गया है जहाँ अब तक उन्होंने क़दम नहीं रखा !

नीचे से भों-भों कर भोंपू बजाते हुए बिजली की ट्रेन निकल गयी। रेल के प्रकाशित डिब्बे बिलकुल ठसाठस भरे थे।

'यहाँ ज़रा रुकें, क्यों ?'

इधर-उधर रेल की लाइनें टेढ़ी-मेढ़ी बिछी थीं। अंधकार में प्रकाश की माला खिल रही थी। पास से बस, दो मंज़िली-एक मंज़िली गाड़ियाँ, टैक्सी, लॉरी—भाग-दौड़ कर रही थीं। ख़ूब हवा थी। अब पुल की इस ऊँचाई पर आकर उनकी घर लौटने की जल्दी जैसे मन्द पड़ गयी।

'अरे,' वह बहुत मुलायम गले से बोला, 'लेक चलोगी ?'

उसकी पत्नी ने आँखें फाड़कर देखा। अजीब उदास, अजीब विभ्रान्त ! दबे गले से पूछा, 'जाओगे ?'

उसका गला और भी धीमा पड़ गया। बोला, 'तुम्हें डर नहीं लगेगा ?'

उसकी पत्नी की आवाज़ अटक रही थी। बोली, 'ऊँ हूँ।'

उसकी बात लगभग सुनायी ही नहीं पड़ रही थी। बोला, 'क्यों ?'

उसकी पत्नी ने आँखें बन्द कर लीं। बहुत धीरे से बोली, 'पता नहीं।'

केया और उसके वर्तमान का एक टुकड़ा

हवा ख़ूब चल रही थी। उसी रात को शादी का निमन्त्रण निबटाकर वह और उसकी पत्नी गरियाहाट के पुल की सबसे ऊँची जगह पर खड़े थे। बिलकुल चुपचाप। किसी भी ज़रूरी या ग़ैर-ज़रूरी काम की ओर उनका

ध्यान बिलकुल नहीं जा रहा था। यथा : (एक) उन्हें अपने उसी मुहल्ले में लौटना पड़ेगा, (दो) आजकल कलकत्ता में डर के कारण सभी लोग शाम होते ही घरों में घुस जाते हैं, (तीन) सवारी के लिए गाड़ी का मिलना भी मुश्किल होता है, (चार) अपने मुहल्ले के बहुत ही परिचित परिवेश से बाहर रहना ठीक नहीं है, बल्कि खतरनाक है—किसी भी समय, किसी के हाथों खून हो सकता है, इत्यादि।

फिर भी गरियाहाट के पुल पर उस ऊँचाई से, रात के दस बज जाने के बाद भी उन्हें हिलने की इच्छा न हुई।

मेरी पत्नी के बाल कितने कम हो गये हैं। जोरों की हवा में उसकी पत्नी के आगे की ओर के कुछ बाल फरफर उड़ रहे थे। और उसमें उसने देखा कि उसकी पत्नी का सिर कितना विरला हो रहा है। कितने बाल थे कभी मेरी पत्नी के सिर पर? गुच्छे-के-गुच्छे! अब मैं अपनी पत्नी की कभी अवहेलना नहीं करूँगा—सिग्नल की लाल-लाल चमकती आँखों की ओर देखकर उसने प्रतिज्ञा की। बहुत प्यार करूँगा। बहुत दुलार दूँगा। उसके बालों की लटों में, जो कुछ भी बची हैं, सिर छिपाकर सोयी हुई पत्नी के बालों और शरीर की चुपचाप गंध लूँगा।

यह जरूर है कि बालों की लटों की गंध लेना उसे उसकी पत्नी ने नहीं, केया ने ही सिखाया था। स्नान कर बाथरूम से निकलते ही केया कंघी फेरते-फेरते उसके आगे आकर खड़ी हो जाती, लेकिन तभी जब वह केया के घर होता। 'यह देखो तो,' कहकर भीगे हुए बाल उसकी नाक में ठूँस देती। 'क्यों, कैसी गंध है?' कहकर केया हँसने लगती। यह केया के सुदूर अतीत की बात थी। उसके भी। वर्तमान में केया शची की पत्नी थी। शची माने एस० डी०, यानी उसके प्रतिष्ठान का चीफएक्जिक्यूटिव : सेल्स। उसका बॉस। केया उसकी बिलकुल चढ़ती वयस की स्त्री-मित्र थी। केया अब बाकी रह गयी थी केवल अपनी पत्नी के बालों में। उसके शरीर में जब प्रतिक्रिया न होती तो वह अपनी पत्नी के बाल खोल देता। कोरी

बालों में मुंह डालकर गंध लेता, लेते-लेते कल्पना करता : सुदूर अतीत से उठकर आती एक ज्वार, ज्वर, कामोत्तेजना का एक स्राव सब बाधाओं के जाल के दोनों छोर काटकर उसके शरीर पर फैल जाता। छिटक जाता। उसी रात या दिन को जब भी इस तरह की अलौकिक घटना घटती, तो उसे लगता कि उसे कोई कष्ट नहीं है। उसका शरीर ताज़ा, स्वच्छ, हलका-सा हो जाता।

फिर केया को किसी दिन भी बिस्तर पर लिटाने की इच्छा नहीं हुई, अब भी नहीं। केया अगर आकर मुझसे सटकर बैठ भी जाये, सम्पूर्ण रूप से निरावरण होकर, फिर भी मैं चंचल नहीं हो उठूंगा—यह बात शपथ-पूर्वक कह सकता हूँ। मैं उन दिनों केया के आगे कठोर नीति-वागीश बन गया था। उसने पत्नी की ओर देखा, और जब वह पत्नी के प्रति प्यार की अनुभूति में भर उठा, ठीक उसी समय स्वीकार करना पड़ा : तुम और मैं जब चरम संग्राम में लिप्त हो गये, केया ठीक उसके पहले के क्षण कहीं से आ गयी, और तुरन्त उसने अपनी अशरीरी हलकी देह तुम्हारे शरीर पर फैला दी मीनू, ऑनेस्ट, तुम्हें पूरी तौर से उसने ढँक लिया। उसको भेद कर तुम्हारे पास मैं पहुंचना चाहता हूँ मीनू, क्योंकि मैं तुमको प्यार करता हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम मुझ पर विश्वास करो।

पत्नी के निकट उसकी माँगों की सूची

वह यदि अपनी पत्नी को चिट्ठी लिखता तो कुछ इस तरह :

प्रियतमासु,

मैं तुम्हारे पास आना चाहता हूँ, तुम मेरे पास आना चाहती हो। ठीक है न? फिर हम एक ही बिस्तर पर सोते हैं—पास-पास तकिये पर सिर रखकर। बदन से बदन सटाकर। लेकिन इसे हम निकट रहना नहीं कहते। मैं भी नहीं, तुम भी नहीं। तब फिर? तब निकट आना क्या होता है? क्या वह इच्छा, जो अचरितार्थ है, जो तुम्हारे-

मेरे सम्बन्ध को कुतर-कुतरकर खाये जा रही है? हम धीरे-धीरे क्षत-विक्षत हो गये हैं। थक गये हैं। एक-दूसरे के प्रति हतोत्साह हो रहे हैं। कभी-कभी निर्दय भी। बीच-बीच में जब मैं हम लोगों के, विशेषतः अपने और तुम्हारे भविष्य की ओर देखता हूँ, तो मुझे लगता है जैसे कि हम दोनों प्रचंड वेगवान उत्ताल तरंगें हैं जो एक-दूसरे की ओर चली आ रही हैं, जिनका परिणाम अनिवार्यतः एक-दूसरे को आघात पहुंचाना है। मैं डर से आँखें मूंद लेता हूँ। तुम भी क्या हमारे भविष्य के सम्बन्ध में ठीक ऐसा ही चित्र देखती हो? डर लगता है? आँखें बन्द कर लेती हो? या कोई और चित्र तुम्हारी आँखों में अंकित होता है? मेरी आँखों में जिस कारण से दूसरा कोई विकल्प नहीं है, यह एक ही चित्र रहता है, और उसी के परिणाम-स्वरूप तुम्हारे और हमारे बनाये संसार में जो छन्दोभंग हो रहा है, उसका शीघ्र ही प्रतिकार करना मैं जरूरी समझता हूँ। आघात पहुंचाना हमारा अपना धर्म नहीं है, काम्य भी नहीं है। हममें से प्रत्येक चाहता है—एक सामंजस्य में पहुंचना, चलने का ठीक ढंग तय कर लेना, क्योंकि वह जरूरी है।

प्रियतमासु, यह तो सही बात है कि हम एक-दूसरे के शत्रु नहीं हैं। हम एक-दूसरे पर निर्भर-मात्र हैं। हमारी ग़लती एक यही है, कि हम एक-दूसरे की किसी प्रत्याशा को सोलहों आना पूरी नहीं कर पाते। इस संसार में कोई भी किसी की प्रत्याशा को सोलहों आने पूरी नहीं कर पाता। इच्छाओं की कोई भौगोलिक परिधि नहीं होती, और साधन अत्यन्त सीमित हैं। अतएव, साधन और साध्य में कुछ अन्तर रह ही जाता है। यह अत्यन्त मूल्यवान सूत्र हम अगर [illegible] मान लें तो जो हमारे मन में बद्ध होता है, हमारा [illegible] सम्बन्ध उस हिंस-भाव से मुक्त हो सकता है। हिंसा-भाव ही [illegible]-आघात का जनक है। घृणा एवं विद्वेष, तथा ईर्ष्या और सन्देह ही इस भाव को पनपाने वाले साधन हैं। इस भाव को दूर रख सकने से ही हमारे कष्ट मिट सकते हैं। अतएव आओ, हम [illegible] इसका निश्चय करें।

अतएव आओ :
(1) हम परस्पर हिंसा-भाव को दूर रखें,
(2) हम परस्पर निकट आयें,
(3) हम एक-दूसरे को प्यार करें, और
(4) हम एक-दूसरे के प्रति आस्था रखें।

उसकी एक क्षण की स्वगतोक्ति

बात यों है। ऐसी चिट्ठी लिखना प्रवचन के समान भाषण देने से कहीं अच्छा है, क्योंकि आठों पहर की घरेलू बातें प्रायः ऐसी ओछी होती हैं कि उन को तूल देकर विषय का महत्त्व सम्यक् रूप से स्पष्ट नहीं किया जा सकता। जिसके साथ दिन-रात घर-बार करना होता है, उससे इस तरह कहा भी तो नहीं जाता। संसार में हर क्षण इस तरह के बखेड़े पैदा हो जाते हैं, बिलकुल तुच्छ कारणों से, कि कहने और सुनने वाले—दोनों के बीच ही हर वक्त व्यवधान की दुर्लंघ्य दीवार खड़ी होने लगती है। स्वाभाविक सम्बन्ध-सूत्र बिलकुल नष्ट हो जाते हैं। फिर देखिये, जो सदा ही पास रहे, उसे चिट्ठी लिखी भी किस तरह जाये? बात नाटकीय हो जाती है! पत्नी के निकट भाषण-सा देने का विचार तो और भी हास्यास्पद है। किन्तु मीनू, तुमसे मैं ये जरूरी बातें कहना ही चाहता हूँ। मुझे कहना ही पड़ेगा।

मीनू, लाल सिग्नल और उसका घरौंदा

कुछ देर के लिए मीनू सब भूल गयी थी। सिग्नल के चमकते लाल प्रकाश का सम्मोहन था। मीनू अब उदास है। समीप ही प्रायः बदन से टेक लगाये उसका पति है, जिसका उसे भान तक नहीं। शीतल वायु उसकी आँखों और चेहरे को आराम पहुँचा रही है। अब उसे कोई कष्ट नहीं है। पुल के नीचे से कितनी ट्रेनें तेजी से निकलती गयीं—इधर-से-उधर और उधर-से-इधर। पुल के ऊपर से बहुरंगी बसें, प्राइवेट लॉरियाँ, टैक्सियाँ गुजर गयीं,

लेकिन उसका इन ओर ध्यान नहीं गया।

अब धीरे-धीरे वह चेतने लगा। लाल सिग्नल को बँधी निगाह से देख रहा है। रेल की लाइनें टेढ़ी-मेढ़ी चली गयी हैं। दाहिनी ओर एक बड़ा-सा मकान है। कमरे-कमरे में रोशनी है। मीनू के हृदय से सहसा एक गहरी साँस निकली। अब उसके मन में कहीं भी जाने की बात नहीं उठ रही है। उसके मन में उद्वेग, अस्थिरता, जलन—कुछ भी नहीं है। उसके गले में सुई गड़ने का-सा दर्द था—अब शायद वह भी नहीं है।

सहसा एक तेज हॉर्न की आवाज से वह चौंक पड़ी। दूसरे ही क्षण उसे लगा कि उसका दाहिना हाथ झनझना रहा है। और याद आया कि वह अपने पति के साथ बहू-भात का निमन्त्रण खाने जोधपुर पार्क आयी थी और अब गरियाहाट के पुल की सबसे ऊँची जगह पर खड़ी है।

जिस घर में किसी के साथ भी उसका परिचय नहीं, उस घर में वह बहू-भात के संस्कार में क्यों आयी ? यहीं पर इतनी रात तक क्यों खड़ी है ? और, घर जाने की ही तबीयत क्यों नहीं हो रही है ? मीनू को कुछ विभ्रान्ति-सी लग रही है। वह कम ही बाहर निकलती है। निकलना चाहती नहीं, क्योंकि वह जल्दी किसी से बातचीत नहीं शुरू कर सकती। उसकी कोई सहेली नहीं। बस की भीड़ में उसका दम घुटने लगता है। उसे डर लगता है। ट्राम पर चढ़ने में उसे डर लगता है कि बीच रास्ते में ही कहीं ट्राम रुक न जाये। वह लिफ्ट पर नहीं चढ़ सकती कि कहीं बीच ही में लिफ्ट अटक जाये और मुसीबत पैदा हो जाये। उसकी तबीयत होती कि केवल पति और बाल-बच्चों को लेकर ऐसी सब जगहों पर घूमने जाया जाये जहाँ उसके पति का कोई परिचित न हो। अपने और अपने लोगों के बीच कोई भी रुकावट, कोई छाया तक वह पसन्द नहीं करती। वह जानती है कि इसके लिए उसे कभी छुट्टी नहीं मिलेगी। इसी बीच चन्द्रमा निकला। यहाँ से आकाश कितना बड़ा, चन्द्रमा कितना प्यारा दिखलायी पड़ता है ! एक सफेद बादल ने मानो चाँद को मलमल का दुपट्टा उढ़ा दिया ! उसे लगा कि घूँघट निकाले चन्द्रमा अब हलके-से चेहरे

पर तैर रहा है। वह भी अगर उसी तरह तैरते-तैरते घर पहुँच सकती! जाकर देखती कि बिस्तर बिछे हैं। बाल-बच्चे खा-पीकर सो गये हैं। सास मुसकराती हुई आकर खड़ी हो गयीं। कह रही हैं—आओ माँ, आओ, देखो तो, चेहरा एकदम मुरझा गया है। जाओ, आज अब कोई बात नहीं करूँगी, शादी की बात कल सुनूँगी। अब आराम करो।

वह : माँ, आपका खाना ?

सास (हँसते-हँसते) : कुछ बाकी नहीं है, सब हो गया है। जूठे बर्तन सब जमा कर दिये हैं। नौकरानी कल आकर धो देगी। चाय के कप, केटली—सब धो-पोंछकर रख दिये हैं।

वह (झूठी शिकायत के ढंग से) : माँ, यह आपकी बड़ी ज़्यादती है। आपसे यह सब करने को किसने कहा था ?

सास : (हँसते-हँसते) : लो, पगली अब इतनी रात गये झगड़ा कर रही है ? जाओ, जाओ आराम करो। कलकत्ता में एक दिन निकलने के माने ही होते हैं उम्र का एक बरस कम हो जाना।

बात को और न बढ़ाकर वह कपड़े-लत्ते उतारे बिना ही बिस्तर पर लुढ़क जायेगी। पति से कहेगी—पंखा पूरी स्पीड पर कर दो न !

या—

वह (जोश से) : जानती हैं, माँ...?

सास (रोकती हुई) : ऊँ हुँ, इस वक्त कोई बात नहीं। चेहरा एकदम मुरझा गया है। लगता है, बस में आयी है। जाओ, पहले मुँह-आँखों को धो आओ। शादी की बात बाद में सुनूँगी।

सास पंखे की स्पीड बढ़ा देंगी।

सास : दो मिनट बैठकर ज़रा आराम कर लो। इतना रास्ता तय करना मुसीबत है।

वह : माँ, आँखें तो मूँदिये, आँखें मूँदिये।

सास आँखें बन्द करेंगी। हँसती रहेंगी।

सास : न, अब यह पागलपन नहीं होगा। लो, आँखें बन्द कर लीं।

वह : हाथ खोलिये।

वे लोग मुझे इन नजरों से देखेंगे, यह मैं शुरू-शुरू में तो नहीं समझी। उसका कारण था कि मैं 'गाँव की लड़की' थी—यह उन लोगों का ही कहना था; मैंने 'लिखना-पढ़ना नहीं सीखा'—यह भी उनकी बात थी; मेरा 'ज्ञान ही कितना है, बुद्धि ही कितनी है'—यह भी उनकी ही बात थी।

वे लोग मुझे 'बहन-बहन,' 'भावज-भावज' करते रहते; मेरे मैके से आये साबुन-स्नो लगाकर सब समाप्त कर देते; मेरी साड़ी, साया, ब्लाउज पहनते और फाड़ते; और मैं सोचती कि ये लोग मेरे अपने हैं, कितने अपने हैं! उस समय भी मेरे अन्दर प्रकाश था।

उसके बाद जब एक दिन देखा कि मेरी सब चीजें समाप्त हो गयीं, सिंगार के सामान का डिब्बा खाली हो गया, साड़ी-आड़ी सब फट चुके थे, और वे लोग मँझली दीदी के कमरे में बैठकर मेरी गलतियाँ निकालते—तब से मेरे मन का प्रकाश थोड़ा-थोड़ा कर बुझने लगा। मुझे तो मँझली दीदी के कमरे में अड्डा लगाने का वक्त नहीं मिलता। खाना-पकाना, परोसना, फिर रसोई, फिर खाना देना! दिन-रात के सारे क्षण मेरे लिए इसी तरह घिचपिच हो जाते। सबसे पहले सोकर उठती; सबके बाद सोने जाती। पति के साथ भी कब कहाँ सोने को मिला? कभी-कभी ऐसा हुआ कि आधी रात को पति की छाती से ढकेल, उतारकर चले जाना पड़ा। घर पर आधी रात को सहसा ननदोई आये: उनके लेटने की जगह अपने पति के पास मुझी को देनी पड़ती। दूसरा कमरा नहीं। मँझली दीदी की तबीयत खराब है—उनकी कच्ची नींद तोड़ने को डॉक्टरों ने मना किया है। माँ के कमरे में सब ठसाठस। घर में सिर्फ मेरे लिए ही जगह न रहती!

जितने दिनों मेरे अन्दर प्रकाश रहा, अच्छा रहा, उतने दिन मैं सहज काम में लगी रही। हाँ, सहज काम में! मैं सबको खाना देती, अपना भात मुझे खुद ही लेना पड़ता। हारी-बीमारी होने पर मुझको ही सेवा-शुश्रूषा करना पड़ती; मुझे कुछ होता तो मैं चुपचाप अकेले भोगती। मेरी याद किसी को नहीं आती। ऐसी छोटी-बड़ी, बहुत-सी घटनाओं से मेरे अन्दर की बत्ती बुझ गयी। हाँ, अब वहाँ अँधेरा है। अब मैं खुद भी तो कुछ देख नहीं पाती।

अब ये लोग कहते हैं—मैं स्वार्थी हूँ। नीच हूँ। मैंने आते ही उनका स्वर्ण-संसार मिट्टी कर दिया। क्यों नही करूँगी ? तुम्हारा संसार तुम्हारे निकट स्वर्ण हो सकता है, मेरे लिए क्या ? केवल अविश्रान्त मेहनत, केवल उपेक्षा, सिर्फ़ और महज़ एकतरफ़ा देना—और देना।

पुल के ऊपर वे दोनों

वह बोला : 'असल में रात ज्यादा नहीं हुई है, पता है ? लेक चलोगी ? चलो न !'

उसकी पत्नी ने बड़े नींद-से भरे स्वर में कहा, 'न, ना।'

वह : 'डर लगता है ?'

उसकी पत्नी : 'नहीं। यहीं अच्छा लग रहा है।'

वह : 'सो तो है। असल में हवा चल पड़ी है न !'

उसकी पत्नी ने कोई जवाब नहीं दिया।

वह : 'कलकत्ता का सब-कुछ तो चला गया। यह हवा ही रह गयी है। अब भी शरीर में शीतलता आ जाती है।'

उसकी पत्नी : 'देखो, यह भी कब किसी घेराव या बन्ध के पल्ले पड़ जाये !'

उसकी पत्नी हँसी। पत्नी को हँसते देख वह भी हँसने लगा।

वह : 'यह जो हर दीवार पर मासिक-धर्म बन्द होने की अचूक औषधि के विज्ञापन चिपकाते है न, तो सोचता हूँ कि उसी कम्पनी से कलकत्ता बन्ध को रोकने की अचूक दवा निकलवायी जा सकती है या नहीं। एक गोली में ही साला बन्ध खुल जाये !'

उसकी पत्नी : 'हटो, असभ्य कही के !'

उसकी पत्नी जोरों में हँसने लगी।

वह : 'शुरू में ही एक गलती कर बैठा हूँ। उस घर से निकलते वक्त ही अगर यज्ञेश्वर से कहता कि गाड़ी का इन्तजाम कर दो, घर जाऊँगा,

ही वह देना ठीक था। खुद क्यों नहीं दी ?'

वह : 'वाह !'

उसकी पत्नी : 'वाह क्या ? सामाजिकता बराबर वालों में ही होना उचित है। तभी मान-मर्यादा रहती है। मुझे क्यों ले गये ?'

वह : 'वाह !'

यज्ञेश्वर का राजसूय और उसकी वर्ग-चेतना (उसकी जवानी)

यज्ञश्वर, हमारे ऑफ़िस की एंप्लाईज यूनियन का जनरल-सेक्रेटरी, अत्यन्त वर्ग-सचेत और उत्साही लड़का है, यही मेरी हमेशा की धारणा है। उत्साही क्यों ? यज्ञेश्वर किसी से सम्मान के साथ बात नहीं करता, किसी को सम्मान-योग्य नहीं मानता। पूजा के पहले हमारे ऑफ़िस में हर बरस जोश का परिवेश बन जाता। किसी-किसी बार सुना जाता कि इस बार और चालाकी नहीं चलेगी, जोरों की हड़ताल होगी। इस बार आठ महीनों का बोनस मिलेगा, नहीं तो आठ महीने कम्पनी का पहिया नहीं चलेगा। यहाँ यह बता देना अच्छा होगा कि हमारी कम्पनी की बिल्डिंग ब्रेबोर्न रोड पर शीट पाइलिंग की हुई दीवारों पर प्रतिष्ठित है, पहियों पर नहीं। इसलिए पहिया नहीं चलेगा के मतलब हम लोगों ने—काम नहीं होगा—समझ लिया था।

यज्ञेश्वर कहता, 'आप लोग एकजुट होकर मेरे पीछे आकर खड़े हो जायें; दलाली करके अपने ऊपर मुसीबत मोल न लें। देखिये, इस संग्राम में जीत हमारी ही होगी। मैं कम्पनी से नहीं डरता, डरता हूँ तो दलालों से; उनसे नफ़रत करता हूँ। मिडल क्लास, यानी मध्यवित्त वर्ग पर मैं विश्वास नहीं करता। वे लोग पेटी-बूर्ज्वा है। वर्ग-गत रूप से ही अवसर-वादी !'

यज्ञेश्वर कहता, 'इस पेटी-बूर्ज्वा वर्ग को लेकर लड़ाई लड़ना और उस लड़ाई में जीत जाना बहुत मुश्किल है।'

किसी तरह का अपना फ़ायदा नहीं चाहा। यह सही है कि उसे चाहने की कोई ज़रूरत ही न होती। मोरचे की सरकार के ज़माने में उसके बड़े भाई की कोशिश से उसे एक बस और एक टैक्सी का परमिट मिल गया था।

हमसे बताया था, अच्छा ही हुआ, हमारी एक सेकेंड लाइन ऑफ़ डिफ़ेंस हो गयी। बस और टैक्सी खरीदने का रुपया भी उसने खूब उत्साह दिखाकर इकट्ठा किया। एक दिन वह सीधे मैनेजिंग डायरेक्टर के कमरे में घुस गया। वह कभी भी स्लिप-व्लिप भेजकर नहीं घुसता था। उन सब बूर्ज्वा लोगों के तरीक़ों में उसे विश्वास न था। उसे वह अपमान-जनक और वर्ग-चेतना-विरोधी समझता !

मैनेजिंग डायरेक्टर से यज्ञेश्वर ने कहा, 'देखिये, आज यूनियन के किसी काम से नहीं आया हूँ, यह मेरा व्यक्तिगत काम है। अगर सुनो तो कहूँ, नहीं तो चलूं।'

मिस्टर मोहता बोले, 'आप क्या घोड़े पर सवार होकर आये हैं ? बताइये, आपका क्या काम है ?'

यज्ञेश्वर ने साफ-साफ़ कह दिया, कि वह एक बस और एक टैक्सी खरीदेगा। परमिट मिल गया है, रुपया नहीं है। अस्सी हजार रुपयों की उसे जरूरत है।

यज्ञेश्वर ने कहा था, 'मैं कोई पक्षपात नहीं चाहता। क़र्ज़ के हिसाब में रुपया आप दिला सकते हैं या नहीं ? जो भी सूद होगा, मैं दूंगा। और आठ बरसों में रुपया चुकाऊँगा।'

मिस्टर मोहता बोले, 'कोई असुविधा न होगी। यहाँ कोई पक्षपात की बात ही नहीं है। सामान्य लेन-देन है ! मैं अपने बैंक से कह दूंगा। मैं आपकी गारंटी दूंगा। कम्पनी से कोई मतलब नहीं। आप बैंक से ही क़र्ज़ ले लेंगे। किसी का किसी पर कोई आभार भी नहीं रहेगा। बस।'

मिस्टर मोहता की तबीयत ठीक नहीं है। एक जड़ाऊ सेट पहले ही भेज दिया था। वही जड़ाऊ सेट यज्ञेश्वर की बहू पहने बैठी है। बहुत

पसन्द आया। मिस्टर मोहता ने कहा था कि आयेंगे नहीं, लेकिन आये थे।

यज्ञेश्वर गरद का ढीला कुर्ता, सोने की चेन, और चुन्नटदार धोती पहने अच्छा लग रहा था। हम लोगों को देखकर वह 'आइये' कहकर आगे बढ़ा। इंडिया किंग का पैकेट खोलकर बोला, 'आज यही पिओ, भाई।' मैंने अपनी पत्नी का यज्ञेश्वर से परिचय करा दिया। वह हँसकर बोला, 'आइये, भाभीजी।' मैं बोला, 'भाई, उसे जरा अन्दर ले जाओ।' वह बोला, 'जरूर, जरूर। चलिये।' तभी केया को लिये दाची घुसा। उसने पहले मेरी ओर नहीं देखा, यज्ञेश्वर की ओर देखा। केया ने मेरी पत्नी की ओर नहीं देखा, मेरी ओर देखकर मुसकरायी। यज्ञेश्वर मेरी पत्नी को छोड़कर दाची और केया की ओर 'आइये-आइये' कहकर बढ़ गया।

उसके बाद वे लोग अन्दर चले गये। मैं और मेरी पत्नी वहीं खड़े रहे। मेरी पत्नी ने मेरी ओर देखा। मैंने देखा कि एक संघर्षशील मजदूर-नेता लाइटर निकालकर मिस्टर मोहता की सिगरेट जलाये दे रहे हैं। मजदूर-नेता यज्ञेश्वर के बड़े भाई के अंतरंग मित्र थे। विशिष्ट अतिथियों की खातिर-तवाजह की जिम्मेदारी उन्हीं पर थी।

यज्ञेश्वर कुछ ही देर बाद व्यग्र होकर लौट आया। हमें देखकर बोला, 'यह क्या, आप अब भी यहीं खड़े हैं? आइये भाभीजी, आओ भाई।'

मैंने देखा कि मेरी पत्नी इधर-उधर कर रही है। मैं बोला, 'चलो-चलो। जितनी जल्दी निबटा दिया जाये, उतना ही अच्छा है। बहुत दूर जाना है।'

'हाँ, हाँ,' यज्ञेश्वर बोला, 'जरा जगह होते ही आप लोगों को बैठा दूँगा। अभी तो शाम हुई है। हमारी ओर से सब तैयार है। सबसे बढ़िया हलवाई को बुलाया है। ज्यादा लोगों को तो बुला नहीं पाया। ऑफिस में जो-जो लोग काफी नजदीकी हैं, उनमें से भी सबसे कह न सका।'

एक मनोरंजक नाटक और उसके पात्र

यज्ञेश्वर चक्रवर्ती : वह। मोहता इंडस्ट्रीज़ का कर्मचारी और उस प्रतिष्ठान की कर्मचारी यूनियन का जनरल-सेक्रेटरी और संघर्षशील मज़दूर-नेता।

रत्ना : यज्ञेश्वर की नवविवाहिता पत्नी।

भुवनेश्वर : यज्ञेश्वर का बड़ा भाई। चतुर कामरेड। लड़ाकू वाम-पंथी दल का अग्रणी नेता।

गगन मुखर्जी : रत्ना का पिता। बहुत बड़ा ठेकेदार।

मिस्टर मोहता : आमन्त्रित अतिथि। मोहता इंडस्ट्रीज़ के मैनेजिंग डायरेक्टर। व्यवसाइयों की सभा के अध्यक्ष।

शची (एस० बी०) : आमन्त्रित अतिथि। मोहता इंडस्ट्रीज़ के चीफ़ एक्ज़िक्यूटिव—सेल्स। पहले कभी कवि थे।

केया : उनकी पत्नी। सुन्दरी, सुवेशा, सुशिक्षिता।

मीनू : मोहता इंडस्ट्रीज़ के एक छोटे अफ़सर की पत्नी। अत्यन्त सामान्य स्त्री।

मीनू का पति : आमन्त्रित अतिथि। यज्ञेश्वर की यूनियन का अराज-नीतिक सदस्य। सामान्य स्तर का लेखक। मन में आशा है कि एक दिन रवीन्द्र पुरस्कार, अकादमी पुरस्कार, राजपीठ पुरस्कार, नोबल पुरस्कार और जय बांगला पुरस्कार पायेगा ! शची का पुराना साथी।

मोरचा सरकार के कई मन्त्री (पहले के) : आमन्त्रित अतिथि।

वही एक और मन्त्री : (वही)।

वही और भी एक मन्त्री : (वही)।

पार्टी के सेक्रेटरी : आमन्त्रित अतिथि।

पुलिस कमिश्नर : (वही)।

डी० सी० ट्रैफ़िक : (वही)।

डी० सी० सिक्युरिटी : (वही)।

डी० सी० साउथ : (वही)।

डी० आई० जी० : प्रेसीडेंसी रेंज : (वही)।

डिवीज़नल कमिश्नर : (वही)।

लेकिन अगर कोई उठा दे ? एकदम से यह सवाल उसके मन में जाग उठा।

यज्ञेश्वर के जेब से रूमाल निकालते ही अजीब-सी एक मीठी गंध फैल गयी। अँग्रेजी सिनेमा देखने चौरंगी अंचल में जाने पर, या एयरपोर्ट के लाउंज में दो-एक मेमों के पास से झपटकर निकल जाने पर इसी तरह की गंध नाक में घुसती है। यज्ञेश्वर ने रूमाल से गला पोंछा। उसके बाद पता नहीं क्यों यज्ञेश्वर ने उसकी ओर देखा। जरा हँसा। उसके बाद बोला, 'तुम्हें कुछ ताज्जुब लग रहा है न ? असल में बात क्या है जानते हो, यह सब भाई-साहब की कारस्तानी है। उम्र हो गयी है न, इस वक़्त थोड़ा भावुक हो गये हैं। बन्धु-बान्धव सभी को निमन्त्रण दिया है। ज्यादा भीड़ जमा कर ली है।'

यज्ञेश्वर का कंठ-स्वर ऐसा मुलायम होगा, ऐसी उसे भनक तक न थी।

केया के आते ही यज्ञेश्वर 'जरा आ रहा हूँ, भाई' कहकर चला गया।

केया के बदन से भी यज्ञेश्वर के रूमाल की-सी मीठी-मीठी गंध फैल रही थी।

केया ऐसी सुन्दर दीख रही थी कि उसके समीप आकर बैठते ही सबकी नजर उस पर पड़ी। शची इस बीच क्रम से मिस्टर मोहता, पुलिस कमिश्नर, और मोरचा सरकार के कई प्रभावशाली भूतपूर्व-मन्त्रियों के साथ सामान्य भाव से बातें कर रहा था और बीच-बीच में हँस भी रहा था —आज वह ज्यादा ही हँस रहा था।

उसने केया से कहा, 'तुम यहाँ ? खाने को नहीं बैठीं ?'

केया बोली, 'तुम्हारी बीवी तो खूब खा रही है !'

इसके बाद क्या कहा जाये, उसे फ़ौरन सूझ न पड़ा। केया उसके पास आकर बैठ गयी। सभी लोग केया की ओर देख रहे हैं, इसके मतलब कि

उस पर भी सबकी नजर पड़ रही है। इसके माने कि वे दोनों जो बातें कर रहे थे, उसे भी सब ने लक्ष्य किया। तो? अब सहसा चुप हो जाना क्या ठीक होगा?

एक सज्जन पान चबाते-चबाते निकले। केया को देखकर, 'अरे, सब ठीक तो है? बाबा की क्या खबर है?' कहकर जरा रुके।

केया बोली, 'सब ठीक है। बाबा अब एक बार नीचे आकर बैठते हैं। ठीक ही है।'

'अच्छा, अच्छा,' सज्जन खुश हुए। बोले, 'यादवपुर में घर बनाकर बड़े झमेले में पड़ गया हूँ। बड़ा हंगामा है। और बरदाश्त नहीं होता। लगता है कि वह मकान छोड़ ही देना पड़ेगा। तुम्हारी मौसी तो डर के मारे अधमरी हो गयी हैं। समाज में स्थिति नहीं है। घर-घर बनाने से फ़ायदा ही क्या?'

केया बोली, 'मौसी नहीं आयी?'

'अभी-अभी आयी हैं बुनू के साथ। मिलोगी?'

केया बोली, 'मिलने जाऊँगी।'

'अच्छा,' सज्जन बोले, 'अब जरा उधर चलूँ।'

'अच्छा,' सज्जन के दूर जाने पर केया बोली, 'पता है यह घर किसका है? इन्हीं सज्जन का। यह सज्जन कौन हैं, जानते हो? रत्ना के पिता।'

उसे भी इतनी देर बाद बात करने को मिली। बोला, 'परमेश्वर के ससुर?'

'वह मेरे पिता के मित्र हैं,' केया बोली, 'मामूली अवस्था से काफ़ी परिश्रम कर खूब पैसा पैदा किया है। मौसाजी के हाथ भी खुले हैं। लड़की को बिलकुल निहाल कर दिया है। पैरों के तलवे पर और ओंठ के नीचे सफ़ेदी है—इसीलिए शादी नहीं हो रही थी। रत्ना लड़की लेकिन बहुत अच्छी है। यह घर भी दहेज में दिया है या नहीं, समझ नहीं आता!'

उसे सहसा परेशानी-सी लगने लगी। फ़ौरन केया से बोला,
या !'

दूसरे एक आदमी के आकर केया के साथ बात करने से उसने मन-ही-मन कहा—इसमें यज्ञेश्वर का कोई हाथ नहीं। उसके बड़े भाई ने ही सारी व्यवस्था की है। भाई की अब उमर पक गयी है। समझती ही हो इस उम्र में लोग ज़रा ज़्यादा भावप्रवण हो जाते हैं। इसीलिए...।

केया ने उस आदमी से कहा, 'मेरा फ्रिज पहले-सा काम नहीं दे रहा है। आपने तो उस वक़्त बहुत गारंटी दी थी।'

वह आदमी हँसा। बोला, 'सचमुच वह बहुत अच्छा फ्रिज है। यहाँ भी तो वही फ्रिज दिया है। लेकिन मॉडल दूसरा है। यह बहुत बड़ा है। फ्रिज का कोई क़सूर नहीं है।'

केया बोली, 'तो हमें इतनी तकलीफ़ क्यों दे रहा है ?'

वह आदमी हँसा। बोला, 'तकलीफ़ दे रही है कलकत्ता की इलेक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी। वोल्टेज बराबर बढ़ता-घटता रहता है। उससे क्य मशीन अच्छी रहेगी ? इनकी मशीन, देखना, तंग करेगी ही नहीं।'

केया ने पूछा, 'क्यों ?'

वह आदमी बोला, 'यज्ञेश्वर बाबू उस दिन साले के साथ फ्रिज रंग पसन्द करने हमारी दूकान पर आये थे। गगन बाबू को तो जा होंगी, किस तरह का उदार-हृदय है, मुझसे टेलीफ़ोन करके कहा— मेरी मँझली लड़की की शादी है। बड़ी को जो दिया है, मँझली वही दूंगा। उनके बड़े दामाद आजकल बहुत मज़े में हैं। फ़रीद फ़ैक्टरी ले जाने के बाद से हालत एकदम बदल गयी है। गगन बा बड़ी लड़की को जिस तरह का फ्रिज दिया मँझली को भी वैस समझी ?' यज्ञेश्वर बाबू ने जो पसन्द किया, वही दिया।

उसने मन-ही-मन केया को समझाना चाहा कि यज्ञेश्वर अपने भाई को बहुत मानता है।

वह आदमी बोला, 'मैंने उनसे

लेकिन कलकत्ता मे पॉवर-सप्लाई की हालत आजकल बहुत शोचनीय है, जब-तब वोल्टेज गिर जाता है। इसमे मशीन को नुकसान पहुँच सकता है। आप एक काम कीजिये, इसके साथ एक वोल्टेज स्टेबिलाइज़र और ले लीजिये, सिर्फ़ तीन सौ पचास रुपयों का झंझट ही तो है। वोल्टेज बिलकुल एक ही रहेगा और मशीन कोई तकलीफ़ न देगी, कभी नहीं। यज्ञेश्वर बाबू के अपने साले के मुँह की ओर देखते ही वह बोल उठे—यह बात उनसे कहने की क्या जरूरत थी? बिल का पैसा तो हमें देना है। जो आप ठीक समझें वैसा करें। समझी?'

उसने मन-ही-मन केया से कहा—यज्ञेश्वर इस मामले में बहुत झमेले में पड़ गये। समझीं केया, उनके भाई जैसे भावुक हैं...।

वह आदमी बोला, 'यह बात मैंने शची बाबू से भी कही थी; पूछ लीजियेगा। लेकिन वे शायद मुझ पर विश्वास न कर सके।'

न, न, यह ठीक नहीं है—केया झट से मन-ही-मन बोल उठी—उस वक़्त हमारा हाथ कुछ तंग था।

उस आदमी के उठकर जाते ही केया ने उसकी ओर देखा, और वह चौंक उठा, क्योंकि वह केया के मन की बात साफ़-साफ़ सुन पा रहा था।

केया : हमने उधार पर फ्रिज लिया था। हमें तो वह दहेज में नहीं मिला था।

वह मन-ही-मन बोला—इस मामले मे यज्ञेश्वर का कोई हाथ नहीं था। इसके बाद और भी चौंक पड़ा, क्योंकि उसने देखा कि केया भी उसके मन की बातों को खूब समझ रही है।

वह : हाथ तंग था के माने ?

केया : सारा मामला यज्ञेश्वर के सिर थोप दिया गया था। यह सब इन्तज़ाम सारे-का-सारा उसके भाई ने किया था।

वह : ठीक। लड़की किसने पसन्द की ?

केया : उसके बड़े भाई ने।

वह : लेन-देन ?

केया : उनकी कोई माँग नहीं थी। एक भली-सी लड़की, सिर्फ़ सफ़ेद दाग़ होने से उसकी शादी नहीं हो रही थी ! यज्ञेश्वर इस तरह के कोई संस्कार नहीं मानता। वह संघर्षशील व्यक्ति है, क्रान्तिकारी है। वह इस लड़की से शादी करने को तैयार हो गया। बाक़ी मामला उसके ससुर का है। उनके पास रुपया है। वह उदार हैं। उन्होंने अपनी बेटी को खूब दिया। इसमें यज्ञेश्वर क्या करे ? हाँ, इसे यूँ कह सकते हैं कि यह उसकी एक सुरक्षा की दूसरी सीमा-रेखा बनी।

वह : तीसरी सीमा-रेखा कहो। दूसरी रेखा तो एक बस और एक टैक्सी खरीदकर ही तैयार हो गयी थी।

केया बोली : 'आदमी पक्का सेल्समैन है।'

शची अब केया के पास आ गया और वह उसे फिर न दिखायी पड़ी।

शची : यज्ञेश्वर इतना साधन-सम्पन्न है, यह मुझे पता नहीं था। मिस्टर मोहता तक ताज्जुब में पड़ गये। पता है, मुझसे क्या कहा ? बोले, एस० बी०, इन्हीं लोगों के हाथ अब ताक़त की जड़ है। इनके साथ अपना सम्बन्ध इस बात को ध्यान में रखकर ही बनाना पड़ेगा।

शची बहुत दिनों बाद फिर बहुत उत्साहित लग रहा था। वह फिर उनके साथ पुराने अन्तरंग तरीके से बातें करने लगा।

शची बोला, '[illegible] आई थिंक, ही इज राइट। क्या खयाल है ? और तुम्हारा क्या हाल है ? तुम्हारी पत्नी कहाँ है ? दिखायी नहीं पड़ रही है।'

केया बोली, 'वह खाने बैठ गयी है।'

शची को ताज्जुब हुआ, 'इतनी जल्दी ?'

वह चट से बोला, 'काम जितना ही जल्दी हो जाये उतना ही अच्छा। दूर जाना पड़ेगा, वह भी कहाँ !'

शची ने उससे कहा, 'एँ, जाने के लिए इतनी फ़िक्र! हम तुम्हें साथ ले जायेंगे।'

शची ने केया से कहा, 'मैंने मिस्टर मोहता से कहा, यज्ञेश्वर के साथ अब मेरा तो करीब-क़रीब घरेलू सम्बन्ध हो ही गया। मिस्टर मोहता बोले—वह कैसे? मैंने बताया, यज्ञेश्वर के ससुर मेरे ससुर के परिवार के मित्र हैं। सुनकर मिस्टर मोहता खुश ही हुए। तुम यज्ञेश्वर और उसकी बहू को एक दिन हमारे घर आने का निमन्त्रण दे दो।'

शची बोला, 'चलो, तुम्हारे साथ उनकी अच्छी तरह बातचीत करा दूँ। वे सब ऊँचे तबके के अफ़सर हैं। बातचीत बनाये रखना अच्छा ही है। दिन-पर-दिन हालत जो होती जा रही है!'

केया ने थककर उबासी ली। बोली, 'तुम्हारे साथ तो सबसे बात-चीत हो गयी है। बस हो गया। उससे अच्छा है, हम यहाँ ज़रा बातें करें।'

उसकी ओर देखकर केया बोली, 'यह तो आजकल दिखायी ही नहीं पड़ते। पत्नी ने तो नहीं मना कर दिया है?'

लाल सिग्नल के प्रति मीनू की स्वगतोक्ति

यह जो तुम अभी जिस तरह देख रहे हो, ज़रा भी पलक नहीं झपकती—मेरा ख़याल था कि भगवान भी इसी तरह हमारी ओर देख रहे हैं। हम अच्छा करें या बुरा करें, उसकी दृष्टि से कभी नहीं बच सकेंगे। उसी के निकट सब हिसाब-किताब लिखा है। लेकिन क्या सच ही ऐसी बात है, बताओ? जो अच्छा काम करते हैं उनके लिए हिसाब की एक अलग किताब है न? उसी खाते के हिसाब के अनुसार भगवान को उसे कुछ पुरस्कार देना होता है। ठीक है न? कम-से-कम ऐसा कुछ किये जाने से वे समझ सकते हैं कि कहीं न्याय का विचार करने वाला कोई है। नहीं तो मैं अच्छा काम करके भी देखूँ कि हमारे भाग्य में वही दुर्गति है तो लोग अच्छा काम क्यों करना चाहेंगे, बताओ तो?

हमारा काम ही बहुत अजीब है, पता है? मैं तो कोई मं लगा पाती। रोज़ रात को सोने के पहले बिस्तर पर बैठकर मन

को पुकारती हूँ, वही बचपन में जैसे दादी ने सिखा दिया था, वैसे ही। रोज़ ही उनसे कहती हूँ : ठाकुर, मैंने कहाँ ग़लती की, मेरी भूल कहाँ हुई? क्यों मैं किसी से कोई भी प्रतिदान नहीं पाती? मुझे प्यार क्यों नहीं मिलता? बिना चाहे ही तो मैं संसार में सबको जो जिसे ज़रूरत है सब दे देती हूँ, कितनी आशा से अपेक्षा करती हूँ कि वे लोग भी मेरी जो ज़रूरत है, उसे इसी तरह पूरी करें। क्या इसमें बुराई है? क्या यह अन्याय है? और मेरी ज़रूरतें भी क्या बहुत ज़्यादा हैं? मुझे रानी नहीं बनना है। बिलकुल नहीं। बस, कोई आकर मुझसे इतना-भर मुँह खोलकर कहे—तुम्हारे पास कपड़े-लत्ते नहीं हैं, सब फट गये हैं, क्यों? खा लो न! या, ओहो, बहुत काम किया, बिस्तर बिछा दिया है, सो जाओ। क्यों, आँखें क्यों भरी हैं, क्या तबीयत ठीक नहीं है? लेकिन इतना भी तो मेरे भाग्य में नहीं है। सभी केवल मुझसे लेने आते हैं। अगर अपनी हैसियत से देती हूँ तो वे लोग उसकी समालोचना में मुखर हो उठते हैं। मेरी सास की बात सुनोगे? पुराना घर जब उठा देना पड़ा तो क्यों? हाँ, मेरे ही कारण। सब के लिए तो नापकर जगह मिली और मेरे लिए? बहुत कुछ सहने के बाद एक दिन मैंने साफ़-साफ़ कह दिया : घर-भर के लोगों के बीच मैं पति के साथ लेट नहीं सकूँगी। मेरे लिए दूसरे कमरे की व्यवस्था कर दो, नहीं तो मुझे मैके भेज दो।

उस दिन के नाटक में मीनू और दूसरे लोग

मीनू की ऐसी भगवती मुद्रा देखकर सब लोग स्तब्ध रह गये। सास ज़ोरों से रोने लगीं। ननदें तेजी दिखाने लगीं। मँझली की आवाज़ सुनायी पड़ रही है। पर ननद उनके कमरे में जाकर जिस तरह तेज़ी से निकली हैं, उससे लगता है कि वे ही चुपचाप ईंधन जुटा रही हैं।

एक ननद (चिल्लाकर) : 'यह समझने में क्या रह गया कि आग कहाँ लगी है? बेवकूफ़ तो नहीं हैं हम। हम घास में मुँह ठूँसकर तो नहीं चल रही हैं! अब मँझली भाभी का कमरा उन्हें चाहिए! जलन से छाती फटी जा रही है! तुम वह कमरा मत छोड़ना, भाभी। देखें, क्या करेगी!'

(यह ननद टाइफाइड में मरते-मरते को ही आयी थी। तुमने तो देखा था, भगवान, क्यों ? मीनू बोली। बिस्तर पर पाखाना-पेशाब कर देती थी। कोई उसके पास न फटकता। मँझली की तो बात ही नहीं उठती। उन्हें हार्ट की तकलीफ़ है। उनका मन सदा खुश न रहने पर—डॉक्टर ने उनसे कहा था—उनके लिए साधातिक हो सकता है। इसीलिए मन प्रसन्न रखने के वास्ते मँझली दूसरी ननद को साथ लेकर सिनेमा या थियेटर जाती। मीनू बोली, तुमने तो देखा है भगवान, तो इस ननद का सारा झंझट मुझे ही उठाना पड़ा था। ठीक है न ? सिर्फ़ डॉक्टर साहब या अड़ोस-पड़ोस के लोगों के घर में आते ही मँझली की तकलीफ़ उभर आती। यह बात तो ठीक है, सभी यह बात जानते थे कि इस ननद के लिए ही मँझली जान देती है, मैं नहीं। धीरे-धीरे मेरे घर के लोगों ने भी इस बात पर विश्वास कर लिया और सब के अन्त में इस ननद ने भी, चूँकि अब वह मँझली भाभी के अधिकार की रक्षा के लिए इस तरह कमर बाँधकर मेरे साथ झगड़ा करने को उठ खड़ी हुई। मेरे ही विरुद्ध उन सबने गुट बना लिया। कहीं भी अगर न्याय-अन्याय नाम का कुछ है, तो यह किस तरह सम्भव हो ? बताओ, तुम ही बताओ।)

वही ननद (चीख़कर) : 'असल में तुम्हारा कमरा लेने का बहाना है। तुम इस कमरे में पहले से ही हो, इस कमरे में तुम्हीं रहोगी। हाँ, यह क्या कहती है !'

मँझली (मीठे कोमल स्वर में) : 'यह कैसे होगा, भाई ? तुम्हीं को यह कहूँगी, वर के साथ सोने के लिए उसे अलग कमरा चाहिए !'

सास (सिर पीटते हुए) : 'कैसा दिन आ गया है ? कैसा ज़माना है। लाज-शरम कहीं बची नहीं ? बाप-दादे के ज़माने में [illegible] नहीं था, रे ! हमारे ज़माने में सुहागरात को मुँह तक नहीं देखा [illegible] था। और आजकल के बच्चे कहती है ? बहुओं का घूँघट [illegible] [illegible] था। और अब ?' (फिर सिर पीटते हुए) 'हुँह'

(कहीं कमरा होता तो, मीनू ने [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

आपको मालूम था, माँ ? यह सवाल, मैं जब इतनी बुरी हूँ तो, कर सकती हूँ या नहीं, भगवान, बोलो, बोलो तो !)

मँझली बहू (मीठे कोमल स्वर में) : 'मैं इधर-उधर पड़ी रहूँगी भाई, क्या किया जाये, शरीर जब खराब हो, अपने वर के पास जब नहीं जा पाऊँगी, वर के पास सोने का भाग्य जब न हो...।'

सास (गहरी साँस लेकर) : 'ओफ़ ओह, तुम्हारे मुँह से ये बातें सुनकर मेरी छाती फटी जा रही है !'

वही ननद (रुआँसी-सी होकर) : 'वह बात मत कहो भाभी, मत कहो, मत कहो...।'

(मीनू ने भगवान के आगे फिर अर्ज़ी पेश की, देखो, देखो। उन सबके दिलों में एक-दूसरे के लिए कितना गहरा दर्द और प्यार है। उन सबके पास कितना काफ़ी समय है ! उन्हें कितना समय मिलता है प्यार के पेड़ में फूल खिलाने के लिए ! मैं इतना समय कहाँ से लाऊँ ? सूर्य निकलने के पहले मुझे उठना पड़ता है। चाय बनाकर उन्हें पुकारकर उठाना पड़ता है। सबकी सवेरे सुख-निद्रा तोड़ने की मैं ही एकमात्र अपराधिनी बनती हूँ। उसके बाद दुनिया के काम के स्रोत में प्रबल वेग से बहते-बहते क्लान्त, थकी-हारी मैं जब भारी-भारी बिस्तर बिछाकर सबकी व्यवस्था कर सब-कुछ समेट पाती हूँ तब तक गहरी रात हो जाती है। नींद से आँखें बन्द हुई जाती हैं। उस समय मैं और मेरा स्वार्थ-रत शरीर—इसके सिवा कुछ याद नहीं रहता। उस समय प्यार के पेड़ में फूल खिलाने की इच्छा तक नहीं रहती ! वक़्त भी नहीं रहता। तुम तो सब-कुछ देखते हो। फिर चुप क्यों रहते हो ?)

मीनू : 'इस घर में जगह की यदि इतनी कमी थी तो बेटे की शादी करने क्यों चली थीं ? इस तरह बेशर्मी से सोने की मेरी आदत नहीं है।'

सास (चिल्लाकर) : 'शादी क्या हमने की ? मेरे बेटे पर जाने क्या जादू कर दिया था, यह तुम ही जानती हो !'

मीनू : 'तो आपके बेटे ने ही ठीक नहीं किया। उसे ब्रह्मचारी बनकर रहना ही उचित था !'

वही ननद : 'दादा को भलामानुस पाकर पटाते वक़्त नहीं समझी थीं ?'

मीनू : 'तुमसे बात नहीं कर रही हूँ। तुम चुप रहो। मैं माँ से कह रही हूँ।'

(सुनिये माँ, मीनू ने भगवान के दरबार में फिर सवाल किया, सुनिये। इस घर में काम करते-करते मुझे इतनी मेहनत पड़ती है कि रात में बिस्तर पर पड़ते ही नींद के सिवा और कोई इच्छा नहीं होती। आपका ना-समझ बेटा इतना भी नहीं समझता। मेरे अनुभूति-शून्य, अनिच्छुक शरीर से ही यह अपनी माँग पूरी करना चाहता है। आवश्यकता उसकी ही अधिक रहती है। लेकिन उस छोटे-से कमरे में, नीचे बिछे बिस्तर पर जब इतने लड़के-लड़कियाँ सोते हों तो उस आवश्यकता को पूरा करना मेरे लिए कैसे सम्भव है! बताइये। हम इन्सान हैं! हमें बुरा लगता है कि आपके लड़के को मनुष्य की निर्धारित सीमा से खींचकर पशु की सीमा तक ले आया जाये! लेकिन वह सुनता नहीं। वह मतवाला होकर और उग्र हो जाता है। उस समय उसे रोकने में भी मुझे डर लगता है। यह किसी गुस्से की, लोभ की, घमंड की बात नहीं है—सुविधा-असुविधा की बात है। इस घर के ढाई कमरों की सीमा में आप लोगों ने सुनहरे संसार का क्या मोह पाल रखा है, आप ही जानें! इस घर का मोह आप लोग *क्यों नहीं छोड़ पाते, छोड़ने की बात उठते ही क्यों आतंक में* मृतप्राय हो जाते हैं, मैं नहीं समझ सकती। केवल यही समझ सकती हूँ कि इस घर को छोड़ते वक्त कितनी ही पुरानी आदतें आप लोगों को छोड़नी पड़ेंगी, जिन आदतों ने कितने ही असंगत अधिकार-बोधों को जन्म दिया है—वह सब निरर्थक अधिकार-बोध आप लोगों के अहं को तृप्त रखते हैं। यह अ' फिर जीवित है, आप लोगों ने कल्पना में जिला रखा है अतीत सुखों के समस्त चित्रों को अंकित करके। वे सुख या तो कभी थे ही नहीं, या होंगे तो उनसे आज कुछ आता-जाता नहीं है। आज हमारे सबके लिए जितनी जगह की जरूरत है, वह इतने छोटे ठिकाने में पूरी नहीं होती, असल बात तो यह है। है न? मनुष्य इसी तरह तो आगे बढ़ता है।)

मीनू के ज्वलन्त रूप के धारण करने से उस दिन यह हुआ कि उस दिन से उस घर में उसे सभी दूसरी नजरों से देखने ल

सबने कीचड़-भरा तालाब मान लिया था; उसी दिन पहले-पहल समझ में आया कि वह वैसी नहीं है।

उस दिन के भोज में उसकी कुछ सुखद जानकारी

पुल पर खड़े-खड़े उसने अपनी पत्नी को रह-रहकर देखा। लगा कि उसकी पत्नी बहुत सुखी है। कभी वह उदास हो जाती, कभी जैसे स्वप्न देख रही हो। इससे उसे खुद भी सुख मिल रहा था। किस प्रकार का कोमल भाव उसकी पत्नी के शरीर पर फैला हुआ था।—'बूफ़े ही करते, समझे ?' यज्ञेश्वर ने उससे बीच में कहा था। लेकिन क्यों नहीं किया, पता है ? कुछ कुंठित भाव से यज्ञेश्वर ने जवाब दिया था, 'उस काम में कहीं मानो एक बड़प्पन की गंध है। अजीब-सा बूर्ज्वा भाव रहता है। कुछ पता नहीं।' 'हें-हें' करके अपने-आप ही हँसकर वह बोला था, 'तब भी लोग शायद कहते, ब्याह में यज्ञेश्वर ने बूफ़े किया था। समझे। लोग तो समझ-कर बातें करते नहीं। इसीलिए दादा ने कहा—न, पत्तल पर खिलाना ही ठीक है। शुरू से जो चला आ रहा है, वही चलेगा। इसमें कोई बात न उठेगी। क्या कहते हो ?'

सो ठीक है, उसने सोचकर देखा, यज्ञेश्वर का ब्याह इस तरह निष्पन्न हुआ कि किसी ओर से कोई भी बात न उठे। बात उठने के सब तरह के कामों से उन्होंने यत्नपूर्वक अपने को बचा लिया था। यज्ञेश्वर ब्राह्मण है, उसने ब्राह्मण की लड़की से ही शादी की। शुरू से ब्राह्मण का विवाह जिस प्रकार होता है, यज्ञेश्वर का ब्याह भी उसी तरह हुआ। वही अधिवास, नान्दीमुख ! वही शरीर में हल्दी, हाथ में यज्ञसूत्र बांधना ! वही माँ के पास बैठकर कहना, 'माँ, तुम्हारी दासी लेने जा रहा हूँ।' निश्चय ही यज्ञेश्वर ने उपवास किया था। भोर रात को सधवाओं के साथ दधि-मंगल किया था। दिन-भर में दो-एक सन्देश और कई कप चाय पीकर भी रह सकता है। अर्थात् जितना नियम-भंग आचार-सम्मत है, उसे भंग कर वह रह सकता है। इस तरह की बातचीत भी होगी, यज्ञेश्वर को जो थोड़ा भी जानता है, उससे होना सम्भव है, समझता है, जैसे :

यज्ञेश्वर (बनावटी गुस्से से) : 'देखो, बेकार की बात करोगी तो मार खाओगी।'

यज्ञेश्वर की बहन (विवाहित) : 'बेकार नहीं छोटे भैया, यह करना पड़ता है।'

यज्ञेश्वर : 'मुझसे यह सब न होगा।'

यज्ञेश्वर की भावज : 'जो कहती हूँ वह करो देवर, नहीं तो बहू बस में न रहेगी। बुढ़ापे में शादी कर रहे हो न!'

यज्ञेश्वर की छोटी चाची : 'ले बाबा, ले, मुँह खोल। कई डले मसल-कर रखे हैं, धीरे-धीरे मुँह में डाले दे रही हूँ। अच्छा बेटा, राजा बेटा, इसे खा लो। यह दही और चिउड़ा है।'

यज्ञेश्वर : 'तड़के-तड़के यह सब खाना पड़ेगा! पेट खराब हो जायेगा, चाचीजी।'

यज्ञेश्वर की छोटी चाची : 'नियम-रीत तो मानना पड़ेगी, बाबा। दिन-भर निर्जल उपवास में रहना पड़ेगा।'

यज्ञेश्वर (खाते-खाते) : 'इसीलिए तो इस देश में क्रान्ति इतनी जरूरी हो गयी है। अपने इन सब सड़े-गले नियम-रीतियों को अब तक पालकर रखोगी?' (छोटी चाची का हाथ मुँह से हटाकर) 'अब नहीं चाची, प्लीज, कहे दे रहा हूँ कि अब सारा-कुछ पेट से निकल जायेगा।'

अथवा (शाम को)...

यज्ञेश्वर (बनावटी क्रोध से) : 'अब सचमुच थप्पड़ लगेगा।'

यज्ञेश्वर की बहन (तीन-चार बच्चों की माँ—दबे हुए नाक के स्वर में) : 'अरे रे, देखो तो, छोटे भैया कह रहे हैं, मारेंगे। बैठो न छोटे भैया, माँ की गोदी में तो बैठोगे!'

यज्ञेश्वर की भावज : 'जो कह रही हूँ करो न, देवर। सवेरे से खाम-खाह तंग कर रहे हो।'

यज्ञेश्वर : 'मैं तंग कर रहा हूँ कि तुम लोग तंग कर रही हो?'

यज्ञेश्वर की भावज : 'अच्छा, हम ही तंग कर रहे हैं, बाबा;

तंग कर रहे हैं। लेकिन आज रात को ही तुम्हारी सब परेशानी खत्म हो जायेगी।'

सब औरतें खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

यज्ञेश्वर की छोटी चाची : 'बैठो बाबा, बैठो। माँ की गोदी में बैठो। कहो—माँ, तुम्हारे लिए दासी लेने जा रहा हूँ। शुभ दिन किसी को कष्ट नहीं देते। इस घर का क़ायदा-क़ानून जब है...।'

यज्ञेश्वर : 'अच्छा, इस सबके कोई मतलब होते हैं? बेवकूफ़ी की हद है!'

यज्ञेश्वर माँ की गोद में बैठ गया। औरतों ने हूलू-ध्वनि की। माँ के आँसू बहने लगे।

यज्ञेश्वर की भावज : 'देवर, कहो—माँ, तुम्हारी दासी लेने जा रहा हूँ।'

यज्ञेश्वर : 'इस बीसवीं शती में मनुष्य जब चाँद पर जा रहा है—तुम लोग...।'

यज्ञेश्वर की बहन : 'बोलो न, छोटे दादा...।'

यज्ञेश्वर की भावज : 'बोलो, देवर, बोलो...।'

यज्ञेश्वर की छोटी चाची : 'बोल, मेरा बेटा...।'

यज्ञेश्वर : 'माँ, तुम्हारी बहू लेने जा रहा हूँ...।'

यज्ञेश्वर की बहन और भावज : 'यह क्या, यह क्या!'

यज्ञेश्वर की माँ और चाची : 'रहने दो, रहने दो, आजकल के लड़के...!'

यज्ञेश्वर ने उससे कहा, 'मेनू-टेनू सब छकू-दा का है, समझे। एकदम चुना हुआ और उम्दा। खाओ भाई, मैं उधर देखूँ।'

सचमुच बढ़िया खाना था। फ़िश-फ्राई, छोटी मूँग की दाल, परवल के भीतर अंडा भरकर दोरमा, भरवाँ लूची, चिंगड़ी की मलाई करी, रुई

मछली, फ्राइड राइस, फ़र्स्ट-क्लास रेज़ाला, अनन्नास की प्लास्टिक चटनी, पापड़, दही, रसगुल्ले, सन्देश, और वर्क-लगे पान। एकदम बढ़िया !

असल में पास से देखे बिना, उसे लगा, मनुष्य के सम्बन्ध में धारणा कभी स्पष्ट नहीं हो पाती। उसके सामने बैठे पहले की सरकार के संघर्षशील मन्त्री खूब स्वाद ले-लेकर दावत खा रहे हैं। उनके पास बैठे सरकारी अफ़सर लोग, उनके पास यज्ञेश्वर के ससुर, और उनके आत्मीयजन और उधर शची, उसके पास केया, उसके पास वह। बहुत अच्छा माहौल था !

सहमा केया (मन-ही-मन) : कौन सरकारी अफ़सर है और कौन संघर्षशील नेता—इस भोज की मजलिस में देखने से तो समझ में नहीं आता।

वह चौंककर (मन-ही-मन) : न, केया प्लीज़। 'खों-खों-खों...।'

केया ने उसकी ओर मुँह उठाकर देखा।

बोली, 'पानी पिओ, पानी पिओ। थोड़ा लग गया है।'

उसने शरमाकर कई घूँट पानी पी लिया।

वह (मन-ही-मन) : असल में हम आदमी को बाद में देखते हैं, पहले उसकी पोशाक, पदवी—यही सब तो देखते हैं। इसीलिए अकसर ठीक से नहीं समझ पाते, कौन आदमी कैसा है।

केया (मन-ही-मन) : अभी देखकर कौन कहेगा कि उनका इतना रौब है ?

वह (मन-ही-मन) : असल में हम लोग तो उन्हें वर्तमान सामाजिकता की पृष्ठभूमि में देखते हैं। है न ? जब फिर दूसरे...।

केया (मन-ही-मन) : उनमें किसने क्या दिया है, पता है ?

वह विपन्न होकर (मन-ही-मन) : सामाजिकता मनुष्य को...।

केया (मन-ही-मन) : एक ने दी थी चूड़ियाँ और दूसरे ने कड़े, एक और ने दी थी बनारसी साड़ी। दाम पता है ?

ह (मन-ही-मन) : असल में आदमी को...।
केया (मन-ही-मन) : फिर हममें और उनमें फ़र्क ही क्या है ?

वह अच्छी तरह लक्ष्य कर उनका खाना देखने लगा।
एक सज्जन : 'अरे-अरे, कर क्या रहे हो छकू, मार देना है क्या ?'
छकू : 'हथियारवन्द पुलिस जो न कर सकी, वह मैं क्या कर सकूँगा ?'
'हा-हा-हा' करके सव हँस पड़े।
एक दूसरे सज्जन : 'न-न, अव एकदम नहीं। एक भी नहीं।'
छकू : 'एक पीस। मछली विलकुल ताज़ी है। सोनापुर की मछली है।'

छकू वख्शी क्यों ऐसा अच्छा मज़दूर-नेता है, इस भोज की सभा में इस वात को उसने समझा। भूतपूर्व मन्त्री महोदय लोगों को हाथ से रोकने पर भी रिहाई नहीं मिली। छकू के अनुरोध से और भी कई पीस फ़िश-फ़ाई (क्योंकि मछली वहुत ही ताज़ा थी), मलाई करी (क्योंकि वागदा विगड़ी मछली छकू एक-एक कर खुद छाँटकर लाया था), रेज़ाला (वेस्ट मुग़ल रेस्तराँ के वावर्ची को लाकर छकू ने वनाने को वैठाया था) उन्हें लेना ही पड़ा था। और 'न न, और नहीं छकू, यह तो दुखद ज़्यादती है,' यह सव-कुछ कहते-कहते भी एक या दो रसगुल्ले या सन्देश सव को लेना पड़ा था—उन्हें भी, प्रशासन और शान्तिरक्षा के कर्णधारों और अन्यान्य अभ्यागतों को भी।

एकमात्र केया और वह, उनकी पंगत में उसने देखा, वे दोनों रिहा पा गये थे। परोसने वाले ने आकर जव केया को एक पीस लेने के लि आग्रह किया तो वह अजीव तरह की आवाज़ निकालकर इस तरह बो 'मैं पश्चिम वंगाल सरकार के 'अतिथि-नियंत्रण-क़ानून-अनुयायी-व्यक्त को न मानकर मुसीवत में पड़ूँ, आप यह विलकुल नहीं चाहेंगे...।' आदमी ने घवराकर वह पीस शची के आगे डाल दिया।

छकू ने जल्दी से आकर वात हलका करने के लिए कहा, 'प

ऑफ़िस में संचित तनाव बहुत कम हो गया। फैलती हुई खुशबू ने उसे बहुत प्रसन्न कर दिया। खूब साफ़ की हुई बनियाइन और अंडर-वियर ने उसे और स्वस्थ कर दिया। उसने अभ्यासवश कपड़ों की आलमारी खोली; एक हलका-सा सूट निकाल लिया।

अभी तक कोई समस्या उसके सामने नहीं आयी थी। उसका हर क़दम स्वाभाविक और जाना-पहचाना था। जिस भरोसे से मनुष्य बिना किसी प्रयत्न के लक्ष्य पर पहुंच जाये, वह भरोसा उसमें मौजूद था। उसके बाद अकस्मात् जिस क्षण उसके मन में आया कि यज्ञेश्वर के ब्याह में कौन-सा सूट पहनकर जाना ठीक रहेगा, बस, उसी क्षण से उसके मन की शान्ति की नींव हिलने लगी। नॉनसेन्स, उसने अपने को ही डाँटा, व्हाई ऐम आई सो शेकी ?[1]

उसने केया से कहा, 'केया, धोती-कुर्ता दो।'

और वह व्हिस्की की बोतल लेकर बैठ गया।

केया तैयार होकर आने पर केवल यही बोली, 'इस वक़्त क्या इसके बिना पिये न चलेगा ?'

गिलास में ढालते-ढालते शची बोला, 'जस्ट ए स्माल वन। फ़ॉर द रोड।[2] ठीक किया, ब्याह के घर धोती पहनकर ही जाऊँगा। बहुत देर नहीं ठहरूँगा, समझीं। और दैट क्राउड ! आजकल एकदम बरदाश्त नहीं कर पाता। बच निकलना ठीक न होगा, इसीलिए जा रहा हूँ। औप-चारिकतावश, और क्या !'

केया बोली, 'गगन मुकर्जी की लड़की के साथ तो उसकी शादी हुई। शादी में जाने को कह गये थे। उस दिन जा नहीं सकी, इसीलिए आज जा रही हूँ। नहीं तो मेरी भी जाने की वैसी तबीयत नहीं थी।'

शची बोला, 'मेरा भी यही है। गगन मुखर्जी कौन है ?'

केया बोली, 'बाबा का एक मुवक्किल। लेकिन कभी एक मुहल्ले में

---

1. कितनी मूर्खता की बात है ! मैं इस तरह संशय में क्यों हूँ ?
2. बस, एक छोटा पेग। कहते हैं न, राह में चलते वक़्त...।

थे। अब गगन बाबू की बहुत अच्छी हालत है।'

आराम के साथ गिलास से चुस्की लेते-लेते शची बोला, 'अच्छा!' शची के भीतर का तनाव फिर कम हो रहा था।

केया बोली, 'खूब दे-दिलाकर लड़की का ब्याह करेंगे। बड़े दामाद के लिए तो कारखाना ही खड़ा करा दिया था। रत्ना उनकी मँझली लड़की है।'

शची फिर खुश हो गया। बोला, 'उसकी और लड़की नहीं है?'

केया बोली, 'नहीं, लगता है नहीं, क्यों?'

शची बोला, 'न, यों ही। बड़ा दामाद कारखाने का मालिक है। मँझला दामाद श्रमिक नेता। अच्छे खोज निकाले!'

केया बोली, 'तो वह क्या करेंगे! यज्ञेश्वर बाबू क्या करते हैं तुम्हारे दफ्तर में?'

शची फिर ढाल रहा है, यह देखकर केया बोली, 'और पिओगे?'

शची बोला, 'दिस इज़ द लास्ट। यह गगन बाबू के दामाद के सौभाग्य की कामना के लिए! यज्ञेश्वर इज़ अ नाइस चैप। वो मेरे ही डिपार्टमेंट में काम करता है। लेकिन हमारे प्रतिष्ठान में ही इज़ मोर दैन ए जनरल मैनेजर।'[1]

असल में शची की बेचैनी का यही सबब था। शची मिस्टर धारिया की जगह जनरल मैनेजर होने वाला था। ऑफिस की हवा से यही लगता था। पिछले दो वर्षों से यज्ञेश्वर ने जिस तरह धारिया को नेस्तनाबूद किया था उसमें उसकी बात याद आते ही शची का तनाव बढ़ जाता।

शची ने तय किया कि बहू-भात में जायेगा। जितना सौजन्य दिखाना होगा, दिखलायेगा। उसके बाद शरीर ठीक न रहने की बात कहकर जल्दी लौट आयेगा।

---

1. यह आखिरी है। यज्ञेश्वर अच्छा लड़का है। मेरे विभाग में ही काम करता है लेकिन यहाँ किसी मैनेजर से उसकी प्रतिष्ठा कम नहीं है।

केया और उसका (मन-ही-मन) कथोपकथन

केया : अच्छा, शची इतना ड्रिंक क्यों करता है ?

वह (आश्चर्य से) : वाह, उसका मुझे क्या पता ?

केया : क्यों, नहीं पता ?

वह : तुम उसकी पत्नी हो, तुम्हें ही तो जानना उचित है।

केया : सवाल को टाल क्यों रहे हो ? तुम भी तो उसके दोस्त हो।

वह : दोस्त ! ओ, हाँ ! वह तो कितनी पुरानी वात है। तव का शची अव का शची नहीं है। मैं भी अव वह नहीं हूँ।

केया : शची क्या शची था और तुम ही कौन से तुम थे ?

वह : यह तो तुम्हारी जानी वात है, केया। वह शचि था कवि। व्रिलिएंट कवि। तुम जिसके प्रेम में पड़ गयी थीं। मैं भी उससे स्नेह करता था, वह तो वहुत अतीत की वात है।

केया : हाँ, वहुत अतीत की वात। अच्छा कवि वनने के लिए उसने वहुत कष्ट सहे थे। चन्दा करके हम लोगों का व्याह हुआ था। वावा ने शची को वहुत समझाया था। व्याह का सव खर्च देना चाहा था। मैंने वावा की वात नहीं मानी। शची की ही वात रखी।

वह : हाँ, शची की वात मैं भी अमान्य नहीं कर पाता।

केया : हम कोई नहीं कर पाते। उसने सवको वश में कर लिया था।

वह : उसके चरित्र का यही सवसे वड़ा आकर्षण था। वह मानो कड़े पत्थर पर पाँवों को जमाकर वात करता, और हम लोगों के पैर जैसे हवा में रहते ! इसीलिए लगता कि वह जो कहता है, उसके वाद कोई वात कहने को नहीं रह जाती।

केया : उसके वाद ?

वह : उसके वाद !

केया : उसके वाद क्या हुआ ?

वह : उसके वाद क्या होता ? हम सवकी उम्र वढ़ती चली गयी !

केया : उम्र वढ़ जाने से दोस्ती खत्म हो गयी, वाह !

वह : इसमें ताज्जुव की क्या वात है ?

केया : ताज्जुव कर रही हूँ तुम्हारी वुजुर्गी पर। सच्ची वात तुम

किसी तरह कहना नहीं चाहते।

यह : कौन-सा सच छिपा रहा हूँ ?

केया : शची के पैरों के नीचे अब कोई कहीं धरती नहीं है, यह सच है। यह उसे भी मालूम है। इसी से उसे डर लगता है, किसी भी सिद्धान्त पर स्थिर नहीं रह पाता।

यह : शची किससे डरता है ?

केया : मिस्टर मोहता से, यज्ञेश्वर से, मुहल्ले के लफंगे लड़कों से, तुमसे, मुझसे—और-तो-और अपने से भी। यह अचकाना डर है। याद है, कभी उसे अखबार पढ़ने का कैसा नशा था ? शुरू से आखिर तक अखबार पढ़े बिना उसे खाना हजम न होता। अब हमारे घर में कोई अखबार नहीं आता। सब बन्द कर दिये हैं।

यह : क्यों ?

केया : हर दिन हत्या की खबरें छपती हैं। कहीं उन पर आँख न पड़ जाये, इसीलिए।

पुल के ऊपर दोनों : गृहस्थी की चिन्ता

शीतल वायु का स्पर्श होने पर शरीर स्वस्थ हो जाने से उसकी पत्नी की बात करने की इच्छा जाग उठी। मीनू को यह हमेशा क्षोभ रहा था कि वह अपने पति के साथ किसी तरह तबीयत भरकर बात न कर सकी। उसकी दुनिया में हाड़तोड़ परिश्रम उसको नहीं अखरता था, किन्तु उसको कोई मुँह नहीं लगाता था, यह उसके मन को बहुत सालता। खास तौर पर जब वह अपने पति के पास दो बातें करने जाती—कोई खास बात नहीं, यों ही सीधी-सादी बातचीत—तो वह देखती कि उसके पति किताब में मुँह गड़ाये बैठे हैं और जवाब नहीं देते, तो उसका सारा जोश ठंडा पड़ जाता। वह बहुत खीझ उठती। तो वह क्या कुछ भी नहीं है ? और जभी उसे लगता कि वह कुछ नहीं है तभी उसके मन में आता कि वह उसके लिए कितना कुछ तो करती है। वह उसका दान दोनों हाथ भरकर लेता और प्रतिदान में कानी कौड़ी भी न देता ! इतना स्वार्थी है वह। यह

बातें जब उसके मन में उठतीं तो उसे लगता कि संसार एक रस्सी के समान बनकर उसे जल्दी-जल्दी कसता जा रहा है। उसकी देह में, उसके गले में फन्दा पड़ा है। फन्दे में धीरे-धीरे खिंचाव बढ़ रहा है। कई रातों को डर के मारे उसकी नींद टूट जाती। पसीना बहने लगता; उसका सिर फटने लगता, और ताज्जुब है कि वह पड़े-पड़े देखती कि वह यन्त्रणा पा रही है। तिल-मिल कर मर रही है। उसके लिए कहीं जरा भी किसी को कोई फ़िक्र नहीं।

उसके जीवन में बहुत कम ही ऐसा अवसर आता जबकि उसे अच्छा लगता, जैसे कि इस समय! तभी उसे बातें करने की इच्छा होती। मीनू ने अपने पति के चेहरे की ओर देखा। उसकी दृष्टि कहीं सुदूर चली गयी थी। एकदम तन्मय होकर कुछ सोच रहा है। उसका चेहरा बहुत कोमल, बहुत करुण हो गया है। कुछ पहले न जाने फुसफुसाकर क्या कह रहा था? न जाने उससे कहाँ चलने की कह रहा था? ओ हाँ, याद आया, उसे लेकर लेक जाना चाहता था। मीनू के ताप चढ़े वयस्क शरीर में भी सिहरन खेल गयी। लेक जाना चाहा था मीनू के पति ने, उसे लेकर! भरपेट निमन्त्रण खाकर। किन्तु 'यह कलकत्ता क्या हो गया है, भाभी!' यज्ञेश्वर की एक बहन ने मीनू से पूछा था।

सहसा कोई जरूरी बात मानो याद आ गयी हो, इस भाव से मीनू बोली, 'यज्ञेश्वर बाबू की एक बहन को मैं पहचानती हूँ, जानते हो?'

अचानक वह अपनी पत्नी की बात समझ न सका। वास्तव में वह अन्यमनस्क मनोवस्था में था। उस समय केया उसके दिमाग़ में थी। वह बहुत परेशान हो गया।

केया बोली, 'शची यज्ञेश्वर के घर केवल औपचारिकता निभाने आये थे—जल्दी ही खिसक आयेंगे कहकर आये थे। तुम्हें क्या यह पता है?'

वह बोला, 'ऐसा है क्या?'

मीनू बोली, 'हाँ। वह हम लोगों की समिति में आती थी। वह

...की बहन है, यह मुझे यहाँ आने पर ही पता चला। लड़की बहुत
...है। इसी बीच कोशिश करके उन्हें किस-किस ने क्या-क्या दिया है,
...तलाया। पाया भी बहुत है।'

केया बोली, 'शची ने आने के पहले तो मुझसे यही कहा था।'

वह बोला, 'यही होगा।'

मीनू बोली, 'वह लोग तो इस मुहल्ले से चले आये थे। उनके घर
बहुत बम-बम पड़े थे। यज्ञेश्वर के भाई पर एक दिन कई लोग पाइपगन
...कर हमला करने भी आये थे। उसकी बहन ने कहा—असमर्थ होकर उठ
...आये, भाभी। नहीं तो कितना बड़ा मकान था हमारा! और पानी के भाव
...का किराया? लड़ाई के दिनों हमारे बाबा ने किराये पर लिया था।
पचास रुपये किराये में आठ कमरे। हमारा जनम-करम सब यहीं हुआ।
उसकी बहन बोली कि पता है, यह मुहल्ला उसके दादा के दल की मुट्ठी
में है। इसीलिए इस ओर से वे निश्चिन्त हैं।'

केया बोली, 'उसी शची को देखो तो। आया, घूम-फिरकर बातें की,
मजाक सुना, मजाक किया, कितना कुछ खाया। वह इतना नहीं खाता
है। यह मिस्टर मोहता को खुश करने की बात नहीं है। वह मानो यज्ञेश्वर
की नजर में चढ़ने की कोशिश कर रहा है।'

वह बोल उठा, 'क्या कह रही हो?'

मीनू बोली, 'हाँ। उसकी बहन ने कहा—वे डर के मारे चले आये
थे।'

केया बोली, 'मैं कहती हूँ, शची डर गया है। पता नहीं, वह यज्ञेश्वर
से क्यों डरता है?'

वह बोला, 'यह तुम्हारी कोरी कल्पना है। इसमें डर की भला ...
बात देखी?'

मीनू बोली, 'उसकी बहन ने बतलाया था। मैं क्या मन में बना...
है? उसकी बहन फिर बोली—हालत यह हो गयी थी कि उसका घू...
फिरना तक बन्द हो गया था। न सिनेमा जा सकते थे—और ...
निकलना उन लोगों ने बन्द कर दिया था। सिर्फ यज्ञेश्वर और उस...
...को उनके दल के लड़के पहरे में ले जाते। उन्हें भी अकेले में

की हिम्मत नहीं होती थी।'

केया बोली, 'व्याह के घर आने के पहले शची ने सहसा दो पेग व्हिस्की पी ली, जिससे कि उसे यहाँ आने की हिम्मत पड़ गयी !'

मीनू बोली, 'मुझे तो लगता है कि इस मुहल्ले में आकर भी वे बहुत निश्चित नहीं हैं। घर के बाहर कितनी पुलिस थी, देखा था ?'

केया बोली, 'पुलिस के बड़े-बड़े अफ़सरों के साथ शची किस तरह दोस्ती कर रहा था, देखा था।'

वह बोला, 'इसमें अस्वाभाविक क्या है ?'

उसने यह बात कही ज़रूर, किन्तु अकस्मात् खुद ही एक अस्वाभाविक काम कर बैठा। पुल की रेलिंग पर दोनों हाथों के बल गोरिला की तरह झुक गया। उसके बाद आसमान फाड़ने वाली हँसी हँसने लगा। उसके बाद—जैसे आकाश-पाताल काँप उठे उस तरह—चिल्लाकर बोला, 'और जिनके दल में लड़के नहीं हैं, पुलिस अफ़सर नहीं हैं, वे क्या करेंगे ? यू बास्टर्ड्स[1] !'

उसके पागलपन की लम्बी कैफ़ियत

मीनू बहुत डर गयी थी। उसकी आँखों और चेहरे से बहुत घबराहट के चिह्न प्रकट हो आये थे। मैं जानता हूँ, वह सोचती है कि मेरा दिमाग खराब हो गया है। अभी ही वह घर जाना चाहेगी। उसके पहले ही आप लोगों को अपनी बात बता देना चाहता हूँ। आप लोगों ने, जिन्होंने हम दोनों को इस पुल पर आते देखा और इतनी देर से हमारे रंग-ढंग को बहुत बारीकी से लक्ष्य कर रहे हैं, उनसे मेरा प्रश्न है—निश्चय ही आप लोग मीनू की तरह, मानें मेरी पत्नी की तरह, मुझे पागल समझ रहे हैं। ऐसा सोचने का कोई कारण नहीं है। मैं सचमुच में स्वाभाविक हूँ, आप लोगों की तरह ही साधारण। बहुत दूर से, उत्तर कलकत्ता से दक्षिण, बहू-भात में निमन्त्रण खाने आया था। यह ज़रूर

1. ओ हरामजादो !

है। अच्छा, अब बताइये, कोई अगर इस संसार में रहकर कहे, मैं प्यार करना चाहता हूँ, तो क्या वह पागलपन है ?

अगर यह पागलपन हो तो मैं सचमुच पागल हूँ, क्योंकि मैं सर्वदा अपनी पत्नी को, पत्नी के शरीर और मन और सत्ता को, किस तरह प्यार करूँ, इस प्रयत्न में रहता हूँ। मैं मीनू को सुरक्षित रखना चाहता हूँ, क्योंकि मेरे घर के लोग उसे अच्छी तरह नहीं समझ सकते। सच कहने में क्या, कौन किसे समझ सकता है ? हम सभी तो बहुत कुछ अनुमान लगाकर ही चलते हैं !

जो कुछ भी हो, मैं कोई व्यतिक्रम नहीं चाहता। पत्नी को साथ लेकर ऑफ़िस के सहकर्मी के बहू-भात के निमन्त्रण को स्वीकार करके आना व्यतिक्रम है, आशा करता हूँ कि आप में से कोई ऐसा नहीं कहेगा। सच कहने में क्या है, यज्ञेश्वर के बहू-भात में न आने से भी चलता। मैं और वह एक ही विभाग में काम करते हैं, एक ही कोआपरेटिव सोसायटी के सदस्य हैं, और जिस कारण से वह हमारे ऑफ़िस की यूनियन का निर्विरोध नेता है, उसका ऑफ़िस का काम प्रायः ही इकट्ठा होता रहता और शची के आदेश से प्रायः ही उसका बाक़ी काम मुझे ही करना होता—यज्ञेश्वर के साथ सम्बन्ध का पहला आधार यही बना। इससे ज्यादा नहीं, कम भी नहीं। कुछ समय हुआ, यज्ञेश्वर ने मेरे साथ दो-एक व्यक्तिगत समस्याओं के बारे में बात करना शुरू किया। उसके परिणामस्वरूप हम कुछ अन्तरंग हो गये। उसी सूत्र से हमने एक-दूसरे को 'आप' से 'तुम' कहना शुरू कर दिया। बस इतना ही।

तो इसके लिए बहू-भात में आना ही होगा, ऐसी खास लाचारी तो नहीं थी। अपनी स्थिति इतने विस्तार से समझानी पड़ी, वह इस कारण से कि मैं सचमुच मीनू को लेकर घूमने निकला, उसके साथ कुछ अकेले रहने के लिए—यह बात समझा नहीं सकूँगा। अब देखिये, हम इस पुल पर इतनी देर से पास-पास खड़े हुए हैं, यह तो आप लोगों को अस्वाभाविक नहीं लगता ?

ाया था किस तरह, वह भी आप लोगों को बता दूं। घर से निकल-
क भीड़ वाली बस में झूलते-झूलते नौ नम्बर के बस टर्मिनस पर
था। दूसरी मंजिल पर एकदम सामने की सीट पर बैठेंगे, इसलिए।
, एक ही बस खड़ी थी। चटपट उसके ऊपर चढ़कर अपने मन के
ाबिक जगह मिल गयी। कलकत्ता में यह जरूर ही कहने लायक घटना
परियों की कहानी-सी है। सचमुच परियों की कहानी, क्योंकि यह बस
ली नहीं! कुछ देर बाद एक बस, जो भरी हुई आयी, पता नहीं कहीं
, सुना कि वहीं जायेगी। उस बस में हमारे मन के मुताबिक सीट नहीं
थी। उसमें चढ़ने का सवाल ही नहीं उठता था। तभी हमारा संकल्प स्पष्ट
हो गया—आज सिर्फ मैं और मीनू होंगे। किसी भी ऐसी घटना को आज
हम अपने दोनों के बीच बाधा नहीं बनने देंगे।

मो राह देखते रहे। बीच-बीच में नीचे उतरकर जिसको स्टेट बस
की वर्दी पहने पाता, उससे पूछता, यह बस कब चलेगी? वह कहते, उधर
पूछिये। उधर का आदमी फिर दूसरी ओर भेज देता। वह फिर एक दूसरे
आदमी के पास! कलकत्ता शहर में निश्चय ही हमारे साथ आप एक राय
के होंगे कि स्टेट बस कर्मचारियों से इस तरह का व्यवहार मिलना कोई
अस्वाभाविक नहीं समझा जाता। इसीलिए मैं सब सहता रहा, और अपने
निश्चय पर डटा रहा। आज मैं और मीनू हैं—बस।

एक और बस आयी। चली गयी। मीनू फिर भी मेरा मतलब नहीं
समझी। वह तब भी जानती थी कि निमन्त्रण में जाना ही हमारी
यात्रा का लक्ष्य है। इसीलिए वह प्रत्येक बस के छूटने पर अधीर हो रही थी

मैं मीनू के पास बैठकर मन-ही-मन समझाने की चेष्टा कर रह
कि परेशान मत होना, मीनू। हम दूसरी बस से नहीं जायेंगे। हमारी
यही है। अगर यह हमें कहीं पहुंचा देना चाहे, तो जायेंगे। न च
दोनो यहीं बैठे रहेंगे। जब तक अच्छा लगेगा, तब तक! उसके बा
तो उतर जायेंगे। आओ, आज हम इस बस पर बैठकर अच्छे
अध्याय शुरू करें। मीनू ने शायद समझने की कोशिश की, शायद

यदि उपहार में देने के लिए खरीदी साड़ी उसकी गोद में पड़े-पड़े उसे विरक्त न करती ! फिर भी वह कुछ नहीं बोली। सिर्फ़ दोनों पास-पास बैठे रहने के जादू से शायद थोड़ी देर के लिए आच्छन्न रहे। मैंने उससे कहना चाहा, परेशान न होना मीनू। सभी बसें ठिकाने पर पहुँचाती हैं, कोई पहले, कोई बाद में। आओ, हम इसी पर निर्भर करें। तभी शायद हम आगे चलकर आराम पा सकें !

असल में बात क्या थी जानते हैं, अतीत में आवेगवश मैंने मीनू से बहुत-से वायदे किये थे। एक, उसे लेकर कहीं जाऊँगा, किसी अच्छी जगह जाऊँगा। निर्जन, थोड़े प्रसिद्ध या अप्रसिद्ध समुद्र के किनारे, या पहाड़ी शहर, या किसी गहरे जंगल के डाक-बँगले में—सिर्फ़ यह देखने के लिए कि मनुष्यों से दूर, संसार से दूर, सिर्फ़ दोनों के एक साथ रहने में कैसा लगता है !

सच कहने में क्या, असल में मैंने चाहा था—अपने अलिखित उपन्यास के लिए एक मनोरम अध्याय को लिख डालना। ओह, आपसे यह नहीं बताया कि मैं खाली वक़्त में लिखता भी हूँ !

अब तो समझ गये होंगे कि अपनी पत्नी को लेकर एक स्थिर खड़ी बस के दो-मंज़िले पर सामने की सीट पर निश्चिन्त मन से सवार होकर बैठने में कोई अस्वाभाविकता क्यों नहीं थी !

मैं मीनू को किसी प्रतिश्रुत नन्दन कानन में न ले जा सका—उसका कारण मेरी अपनी कोई अनिच्छा नहीं, सीधे-सीधे आर्थिक अक्षमता थी। मैं यज्ञेश्वर की राजनीति नापसन्द करने पर भी उसकी ओर झुका हुआ था, उसका कारण यह था कि मेरे कार्यकारी जीवन में वही एकमात्र व्यक्ति है जो बीच-बीच में मेरी नज़रों में अतिरिक्त लाभ का चित्र खींच देता था। वह चित्र होता कभी बढ़े महँगाई भत्ते का, कभी आठ महीने के बोनस का, या इसी तरह की किसी और चीज़ का। ये सब बातें जिस क्षण से सुनता उसी क्षण से सिर्फ़ अपने और मीनू के निर्जन वास की सम्भावना मानो स्पष्ट और निकटवर्ती हो जाती। किन्तु यज्ञेश्वर जिस तरह अन्त तक थोक रुपया दिला देने का वायदा पूरा न कर पाता, मैं

भी उसी तरह मीनू को लेकर कुछ दिनों के लिए कहीं बाहर जाने का अपना वचन पूरा न कर पाता।

कोई दूसरा उपाय जरूरी था। अपनी माँ को या बहनों को कुछ दिनों के लिए मँझली बहन या बड़ी बहन या दूसरी सब विवाहित बहनों के घर अगर भेज दिया जाता, तब भी इस घर में ही केवल मैं और मीनू—सिर्फ़ हम दो लोग एक-दूसरे का साथ पा सकते। यद्यपि दूसरे माँ के लिए काफ़ी परेशानी जताते और मीनू के हाथों माँ की उतनी सेवा भी नहीं हो पाती थी—इस बारे में प्रायः सब ही सर्वसम्मत सिद्धान्त पर पहुँच गये थे—फिर भी माँ को कुछ दिनों के लिए भी किसी अधिकतर शान्ति की जगह ले जाने के काम के प्रति उत्साह न दिखाते। माँ भी कहीं जाना नहीं चाहती थी। मँझली भाभी या दूसरों के सम्बन्ध में माँ कई बार प्यार-भरी तरह-तरह की बातें करतीं, किन्तु उनमें किसी के पास आकर रहने की बात उठते ही माँ का ओदा ठंडा पड़ जाता।

इसलिए समझ सकते हैं कि मैं और मीनू कुछ दिन अकेले रहेंगे, इतनी छोटी-सी हमारी अभिलाषा भी पूरी न हो सकी। यद्यपि यह बात कष्टकर और दुख देने वाली थी, फिर भी बहुत असामान्य नहीं थी। सैकड़ों परिवारों में इस तरह की या इसी के समान अचरितार्थ अभिलाषा-जनित पीड़ा को सैकड़ों नर और नारी भोग रहे हैं, यह मैं जानता हूँ। उनके पारस्परिक सम्बन्ध, किसी का कोई विशेष दोष न रहने पर भी, केवल बाहरी घटनाओं के अनिवार्य दबाव से क्रमशः परस्पर पीड़ा देने वाले और कटु हो जाते हैं। ये सारी घटनाएँ ऐसी रोजमर्रा की और ऐसी सीधी-सादी समझकर ही शायद हम इन्हें स्वाभाविक मान लेते हैं! और इन सारी घटनाओं का रुख बदलने के लिए शुरू से हमने कोई प्रयत्न नहीं किया। रीति-रिवाज ही ऐसा चला आ रहा है!

किन्तु मैं निष्क्रियता में विश्वास नहीं करता। मैं भविष्य में विश्वास करता हूँ; उद्योग में विश्वास करता हूँ। ईश्वर के दान के रूप में प्यार नहीं मिला तो क्या हुआ? आइये न, हम प्यार की खेती शुरू करें। बर्कले

क्षेत्र में जो लोग एक बार खुम्भी पैदा करना सीख गये वे क्या ईश्वर की परवाह करेंगे ?

यही सोचकर मैं नौ नम्बर के बस टर्मिनस पर मीनू को लेकर पहुँचा। इसी खयाल को लेकर बस की दूसरी मंज़िल पर बिलकुल सामने की सीट पर जाकर हम दोनों बैठ गये थे। मीनू से धीरज रखने की चिरौरी की। उससे कहा, 'बस का भरोसा रखो, वह हमें पहुँचा ही देगी।' और सचमुच प्रायः अलौकिक घटना घटी कि हमारी प्रार्थना पूरी करने के लिए सहसा बस में जान आ गयी। और कैसा ताज्जुब है कि मील-पर-मील रास्ता निगलते हुए उसने हमें जोधपुर पार्क के स्टॉप पर पहुँचा दिया !

इतनी देर तक मीनू मेरे पास थी। मेरे निकट। इतने निकट वह बहुत दिनों से नहीं रही थी। रास्ते पर उतरते-उतरते मैंने मीनू से कहना चाहा—देखा मीनू, भरोसा रखने से ही मंज़िल पर पहुँचा जाता है। इस-लिए आओ, मैं तुम पर भरोसा करूँ, तुम मुझ पर निर्भर रहो, तो देखोगी कि तुम्हें या मुझे कोई भी दुख न रहेगा। एक-दूसरे पर निर्भरता ही प्यार की सीढ़ी है।

क्या कहते हैं आप लोग, यह पागल का प्रलाप है ? इसके सिवा देखिये, इतनी सीधी-सी बात कोई न समझेगा। अपने को मिटाकर कोई निर्भर करता है दल के लड़कों पर, कोई पुलिस पर, और कोई व्हिस्की पीने की बात सोचता है, कि वह अपने से भी अधिक अपनी है। कैसी निष्ठुर हास्या-स्पद बात है !

वह गोरिला की तरह दोनों हाथों से गरियाहाट पुल की रेलिंग पर झुककर आगे की ओर झुका रहा। उसके बाद ठठाकर हँस पड़ा। उसके बाद बोला, 'बास्टर्ड्स ! स्सब साले नक़ाब पहने हैं !'

मीनू की तत्कालीन अस्तव्यस्तता

तुम्हारी तबीयत क्या खराब है ? मीनू उस समय उस गरियाहाट पुल पर

-खड़े कुछ चंचल हो उठी। क्या तुम्हारी तबीयत खराब है ? आँखों
र चेहरे पर पानी छिड़कोगे ? थोड़ा पानी पिओगे ? बैठोगे जरा ? रेलिंग
सहारे खड़े रह सकोगे ? चलो, न हो तो घर चलें। समझ रहे हो ?

मीनू फिर डरने लगी। इतनी देर तक वह बहुत शान्त और स्थिर
ही थी। और अब, इस क्षण उसे कैसी घबराहट हो रही थी ! इसके बाद
मीनू क्रमशः उद्वेग से आक्रान्त होती गयी। उसके लिए बराबर उद्वेग
हानिकर है, ऐसा डॉक्टरों ने कहा था। उसके शरीर में और मन में जो
कष्टकर वेदनाएँ आदि थीं, उद्वेग के बढ़ने से वे भी बढ़ जाती हैं—इ.
बरसों में तरह-तरह की चिकित्सा कर कष्ट जरा भी कम न होने से मीनू को
जानकार विशेषज्ञ चिकित्सकों ने अन्त में उपरोक्त राय दी थी। समझे,
मामला 'साइकोसोमैटिक'[1] है। बहुत दिनों से मीनू जब यन्त्रणा से अत्यन्त
अधीर हो जाती, उससे मातनगाछी के पीर के पास से जाने को कहा गया
था। वह आज तक भी नहीं ले गया। दोनों के सम्बन्धों में खाई पड़ने का
यह भी एक कारण था।

इस प्रकार के अशान्ति के दृश्यों में दोनों को कई बार भाग लेना पड़ा
था, जैसे : स्थान—शयन कक्ष, बिस्तर। समय—आधी रात। मीनू
बेचैनी में इधर-उधर कर रही है। उसका पति एक अँग्रेजी पुस्तक
प्राणपण में मन लगाने की कोशिश रहा है। आवरण पर एक स्त्री
कामोत्तेजक रमणीय तस्वीर है, और उस पर जो अँग्रेजी शब्द लिखा
उसका अर्थ है उपपत्नी।

मीनू (स्वर शिकायत-भरा) : 'बत्ती बुझायेंगे या नहीं ?'

अँग्रेजी पुस्तक में मैं पढ़ रहा था : जितनी भी विभिन्न वेश्याओं मे
परिचय हुआ है, उनमें से सर्वाधिक स्पष्ट वक्ता, खुले स्वभाव वाली
ही थी जो अपने अन्तर के भावों और उद्वेगों को बिना किसी हिचकि
के व्यक्त कर सकती थी।

मीनू : 'मैं परेशानी में मरी जा रही हूँ। कब से आँखें बन्द क
प्रयत्न कर रही हूँ।'

---

1. मनोदैहिक्यों का

अँग्रेज़ी पुस्तक में आगे छपा है :

आखिरकार, मैं भी मज़ा क्यों न लूटूँ ? वह प्रायः मेरी ओर देखकर खिलखिलाकर हँस उठती। क्या मेरे मौज-मजे पर तुम्हें कोई आपत्ति तो नहीं होती ?

मीनू (बहुत तेज़ स्वर में) : 'जाने किससे कह रही हूँ ? तुम इंसान हो ?'

अँग्रेज़ी पुस्तक में :

नहीं, मैं सोच रही हूँ कि हमारी एक-दूसरे के प्रति शारीरिक आसक्ति का आपकी शारीरिक और मानसिक सेहत पर कोई बुरा असर न पड़े !

मीनू : 'छी-छी-छी ! घर पर कुत्ता-बिल्ली पालने पर भी आदमी उसकी देख-भाल करता है। और तुम कैसे हो ! एक इंसान साथ में लेटा चीख रहा है। उसका सिर फटा जा रहा है। और तुम्हें होश ही नहीं। जानवर !'

मीनू फफककर रो पड़ी।

मीनू का पति (ध्यान गया तो, घबराकर) : 'एँ, यह क्या ? मीनू, रो क्यों रही हो ? रोती क्यों हो ? तुमको क्या हो गया ?'

मीनू फफक-फफककर औंधी लेटी रो रही है।

मीनू : 'बाबा-बाबा ! ऊँः-ऊँः, तुम्हारे मन को चोट पहुँचाकर क्या किया। ऊँ-ऊँ ! उसका फल आज पा रही हूँ। ऊँ-ऊँ-ऊँ।'

मीनू का पति (बहुत घबराकर) : 'मीनू, ए मीनू, तुम्हें क्या हो ग है ? बताओ, बताओ प्लीज़ !'

मीनू ऊँ-ऊँ-ऊँ कर फफक-फफककर रो रही है।

मीनू का पति (लाचार-सा मानो दर्शकों के प्रति) : आप ही बताइये। मैं क्या करूँ ? डॉक्टर बुला लाऊँ ? इसका एक चुम्बन ले ही

मीनू रो रही थी।

मीनू का पति (मीनू से) : 'मीनू, मीनू, प्लीज़ !'

मीनू का पति (अपने से) : पाखंडी, नराधम, तू क्षमा के अयो तेरी साध्वी पत्नी ऐसी पतिव्रता है, और वह यन्त्रणा से कातर हो और तुझे धिक्कार है, तू उसकी उपेक्षा कर उसके ही पास लेटा '

मीनू : 'इस पाप का प्रायश्चित जीवन-भर करना पड़ेगा।'

मीनू का पति (मीनू से : सहसा खफ़ा होकर) : 'फिर पुराना रेकॉर्ड बजाना शुरू कर दिया। कितनी बार कहा मीनू, यह तुम्हारी मिथ्या धारणा है। तुम्हारे बाबा ने बाद में हमें आशीर्वाद दिया था।'

मीनू (चीखकर) : 'झूठी बात है।'

मीनू का पति : 'झूठ नहीं मीनू, सच, मैंने तो तुम्हें तुम्हारे बाबा की लिखी हुई चिट्ठी दिखायी थी। कहो, वह चिट्ठी क्या नक़ली थी ?'

मीनू (थोड़ा नरम पड़कर) : 'मेरे बाबा तुम लोगों की तरह झूठी बातें नहीं कहते थे। तुम बार-बार मेरे बाबा की चिट्ठी लेकर मुझ पर चोट क्यों करते हो, बताओ तो।'

मीनू का पति (नरम पड़कर) : 'मैं तुम्हें चोट नहीं पहुँचाता हूँ, मीनू। तुम्हें एक बात ही समझाना चाहता हूँ। हमने प्यार करके ब्याह कर कोई पाप नहीं किया। न मीनू, मेरे पास खिसककर मत आओ। मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूँ। कल से मैं दूसरे कमरे में लेटूंगा।'

मीनू का पति (दर्शकों से) : मैं जानता हूँ कि पति के रूप में मैं अत्यन्त लालची हूँ। मेरी स्त्री कष्ट में है; हाथ, पीठ, गले में सुई गड़ने की-सी निरन्तर तीव्र यंत्रणा से वह परेशान है—मुझसे ज़्यादा अच्छी तरह यह बात और कौन जानता है ? यह भी जानता हूँ कि इस सबके बाद भी आपको जब मालूम होगा कि मेरी अभी, इसी क्षण क्या करने की तबी-यत होती है, तो आप लोग भी मुझे 'निकम्मा, पागल' कहकर धिक्कार देंगे। हृदय ! उत्तेजित मत होना।

मीनू का पति (मीनू से) : 'न मीनू, न, प्लीज़, तुम अब मेरे शरीर से शरीर न लगाना। जरा खिसको। यह क्या, इतने पास अपना मुँह मत लाओ। मेरे बदन पर हाथ मत रखो। न, न, मैं तुम्हारा अधम पति हूँ।'

मीनू का पति (दर्शकों के प्रति) : भद्र महोदय, और महिलाओ ! मैं पत्नी का सहारा पाकर अब रमण की इच्छा रूपी शत्रु के द्वारा बहुत बुरी तरह आक्रान्त, और आत्मरक्षा में असमर्थ हूँ। इस तरह की हालत में एक कमजोर आदमी और अबला नारी की रक्षा करने का कोई

टट के पुल पर वे दोनों

अगर आप लोगों को मालूम हो तो तुरत बतायें।

मीनू (सिसककर : गद्‌गद् स्वर में) : 'गुस्सा तो मैं ही करती हूँ। फेरकर तो मैं ही सोती हूँ। ये उलटी बातें हैं। ओः, उधर होओ न, ा।'

मीनू का पति (मन-ही-मन : आकुल प्रार्थना करते हुए) : हे देव, न्धर्व, हे अन्तरिक्षवासी पितामह-मातामह लोगो, तुम सब साक्षी हो।

मीनू के पति ने ब्लाउज का एक बटन खोला।

मीनू (खिसककर धीमी-धीमी आवाज में) : 'यह क्या, ओह, यह हरकत क्योंकर सूझी ?'

मीनू का पति (मन-ही-मन आकुल प्रार्थना में) : भूचर, खेचर, जलचर, चराचर व्यापी सब जीवो, तुम सब साक्षी हो।

मीनू के पति ने एक बटन और खोला।

मीनू (और भी घनिष्ठ होकर फुसफुसाती आवाज में) : 'नू-ना ! बस, ऐसे ही वक्त बहुत प्यार ! दूसरे वक़्त आँख उठाकर देखने की भी तबीयत नहीं होती।'

मीनू का पति (मन-ही-मन आकुल प्रार्थना) : चेतन और अचेतन विराट् और अणु-प्रमाण, दृश्य और अदृश्य, वस्तु और अवस्तु, ओ समस्त अस्तित्व, तुम सब साक्षी हो।

मीनू का पति एक हुक के साथ खींचतान करने लगा।

मीनू (गद्‌गद् भाव में) : 'अ, फट जायेगा, छोड़ो।'

मीनू ने स्वयं आसानी से हुक खोल दिया।

मीनू (आवेग से अस्थिर) : 'मुझे जरा देखो, मुझे जरा देखो जरा देखभाल किया करो। मैं तो खतम हो गयी हूँ। मैं तो सूख

मरी हूँ।'

मीनू का पति (उद्वेदना से गला भर आया) : 'मैं तुम्हें देख रहा हूँ, मीनू।'

मीनू (मन की भावना उमड़ पड़ी) : 'खाक देखते हो! किस यंत्रणा में मरी जा रही हूँ, एक बार तो पूछा होता?'

मीनू का पति : 'क्यों मीनू, मैं तो तुम्हें डॉक्टर के पास ले जाता हूँ।'

मीनू (और भी अधिक मानवी भावना से) : 'तुम्हारा डॉक्टर खाक कुछ करता है! इतना कहा कि मातनगाछी के पीर के पास एक बार ले चलो।'

मीनू का पति (सहसा दर्शकों से) : नाऊ दिस इज टू मच।[1] मेरी ओर से बात जरा साफ़ कर देने की जरूरत है। मातनगाछी का पीर! मीनू फिर वही पुरानी शिकायत दोहरा रही है। जहाँ डॉक्टर की चिकित्सा से उसे कुछ लाभ नहीं हो रहा है, वहाँ मातनगाछी का पीर उसे किस तरह अच्छा कर सकता है? मेरी तो समझ में नहीं आता। विज्ञान जहाँ असफल हो, दैव भी वहाँ बेकार रहता है। मेरा हमेशा से यही विश्वास रहा है। इसी कारण से मैं मीनू को पीर-वीर के पास कभी नहीं ले गया। बहुत समझाया। कहा कि चिकित्सा-विज्ञान आज तक शायद इस रोग की कोई निश्चित औषधि नहीं निकाल सका। लेकिन दुनिया में चारों ओर रोगों को कम करने के लिए मनुष्यों के अथक प्रयत्न निरन्तर चल रहे हैं। एक दिन दवा निकल आयेगी। मैं इसीलिए मीनू को मातनगाछी के पीर के पास नहीं ले गया—उसी अनाविष्कृत औषधि के लिए जेब में पैसे जमा कर रखे हूँ। मेरी इच्छा है कि मीनू भी विज्ञान के विश्वास में अपने को अर्पित करे।

मीनू (स्वर में तेजी लाते हुए) : 'मेरे लिए तुम्हारे पास समय नहीं रहता। दोस्त की पत्नी को सिनेमा लेकर जाते समय तो बहुत-सा रहता है!'

---

1. अब, यह तो नहीं सहा जाता।

मीनू का पति एक और बटन खोलने जा रहा था, रुक गया।

मीनू का पति (परेशान होकर) : 'समय की-कमी नहीं मीनू, तुम समझती क्यों नहीं कि मैं तुम्हें धोखा नहीं देना चाहता। तुम कहीं जाकर ठगी जाओ, यह भी नहीं चाहता। मैंने कहा था कि पीर का फूंका-पानी —सब ठगी है।'

मीनू : 'लेकिन उस दिन डॉक्टर साहब ने क्या कहा था ?'

मीनू का पति : 'मीनू, सुनो, थोड़ा धीरज रखो। मैं जानता हूँ कि तुम्हारी तकलीफों की हद नहीं है। तुम...।'

मीनू : 'डॉक्टर साहब ने उस दिन क्या कहा था ? कहा था न कि एक बार जाकर देख सकते हो ! विश्वास रहने पर कई बार फल मिल जाता है। कहा था कि नहीं ?'

मीनू का पति (दर्शकों से) · मीनू का कोई दोष नहीं। उस शैतान ने कहा जरूर था। सिगरेट पीते हुए, छल्लों में धुआं छोड़ते-छोड़ते कैसे अकुंठित मुँह से कह गया, यह अगर इतनी ही उत्सुक हैं तो एक बार ले जाइये न ! शायद फूंके-पानी से ठीक हो सकें। आफ़्टर ऑल[1], बात जबकि साइकोसोमैटिक है। हमारी मेडिकल साइंस[2] ही क्या है ? एक अंधा दूसरे अंधे को राह दिखा रहा है ! छ: महीने से मुझे बराबर दुहने के बाद, आज उसका यह कहना है।

मीनू : 'डॉक्टर साहब ने क्या कहा था, बताओ तो ?'

मीनू का पति (हताश भाव से दर्शकों से) : मीनू एक झटके में उस रात को करवट ले गयी। मुझे पता है कि वह फिर इधर न होगी। मैं विज्ञान की वेदी पर समर्पित हूँ। हाय, आज विज्ञान के साथ ही सोना पड़ेगा !

---

1. आखिरकार
2. चिकित्सा-विज्ञान

आज, इस समय इस पुल पर, वहती संजीवनी हवा में, मीनू फिर
के पास है। आज मीनू वहुत अस्थिर है। आज मीनू जो साड़ी पहन-
आयी है, उसमें वह अच्छी लगती है।

वह हँसते-हँसते वोला, 'तुम क्या डर गयी थीं, मीनू ? सचमुच मेरी
सी वहुत ज़ोर की हो गयी थी। वात क्या है जानती हो, छकू वख्शी का
चेहरा याद हो आया था।'

मीनू चैन की साँस छोड़कर वोली, 'ऐसा कहो। सचमुच मैं तो डर
गयी थी।'

वह वोला, 'अरे धत्, इस कलकत्ता शहर में डरने से ही डर लगने
लगता है, नहीं तो कोई डर नहीं। आज यह समझ गया। यह देखो न, यह
छकू वख्शी, यज्ञेश्वर का वड़ा भाई, सारे मन्त्री आये थे, उन से डरने
की कोई वात नहीं। आज इतने नज़दीक वैठकर उनके साथ खाया-पीया,
इसी से समझ सका। ये लोग मामूली आदमियों की तरह हँसते हैं,
खाँसते हैं, वैसे ही खाते हैं, यह देखकर समझ पाया कि हम लोग जो प्रति-
दिन समाचार-पत्रों के द्वारा इनकी वातें पढ़ते-सुनते हैं, रेडियो की मारफ़त
इनका आह्वान सुनते हैं, और उसके वाद सोच लेते हैं कि इनका आकार
कितना विराट है ! कितना कम जानते हैं हम, कितने वेवकूफ़ हैं ! अपनी
वेवकूफ़ी की वात याद आयी, इसीलिए ठठाकर हँस पड़ा।'

यज्ञेश्वर की निजी समस्या

दूसरी और तीसरी पंगत के वीच के समय में जव मीनू औरतों में ज
वैठ गयी और केया भी नहीं आयी, तो वह अकेला वैठे-वैठे अभ्
लोगों के आने-जाने, हँसने, वात करने के ढंग पर वारीकी से ग़ौर क
था, और शची की भावभंगी में वहुत मज़ा ले रहा था। इस वक़्
उसके साथ वातें नहीं कर रहा था; ऑफ़िस में मिलने पर वचकर
जाता और उसे अच्छा न लगता। आज भी अभी तक शची उस
नहीं मिला रहा था, यद्यपि केया ने देखते ही उसके पास खड़े होक
साथ कुछ देर वातें कीं। शची स्पष्टतः उससे वचकर चला जा स

हालत जब यह हो गयी तभी यज्ञेश्वर ने कई वी० आई० पी० अतिथियों को लेकर उसकी पत्नी के साथ परिचय कराकर उसे बाहर लाकर ख़ातिर के साथ बैठाया। कुछ देर उनके साथ मेज़बान-सुलभ शिष्टाचार का विनिमय कर—यह अकेला बैठा है—यह देखकर पास की कुर्सी पर बैठ गया। देखकर लगा कि यज्ञेश्वर थोड़ा थक गया है और अन्यमनस्क हो गया है।

यज्ञेश्वर को व्याह में मिला दूधिया गरद का कुर्ता गले के पास पसीने से गीला हो गया था। यज्ञेश्वर बीच-बीच में उँगली से बाएँ हाथ की अनामिका की अनभ्यस्त बड़ी अँगूठी इधर-उधर घुमा रहा था। उसके पास बैठे यज्ञेश्वर को लगा कि कुछ तो आराम मिला।

यज्ञेश्वर उसके कान में बोला, 'अच्छा, तुम लेखक लोग बहुत सच्ची और यथार्थ की बातें लिखकर इस सड़े-गले व्याह के रीति-रिवाज़ बदल नहीं सकते ? देखो, हमें एक सांस्कृतिक क्रान्ति की ज़रूरत है। तुम्हें किसी तरह की असुविधा तो नहीं हो रही है ? अगली पंगत औरतों की है। उसके बाद की पंगत में ही तुम्हें बैठा दूँगा।'

उसके बाद जेब से रूमाल निकालकर गरदन और पीठ पोंछकर यज्ञेश्वर बोला, 'लगता है कि अमिय-दा नहीं आये। उनके मुहल्ले में शुरू हुई है न—रोज़मर्रा एक हत्या! लगता है कि उन्हें वह मुहल्ला छोड़ना पड़ेगा। हर दिन जो कुछ हो रहा है, इसमें गहरा षड्यंत्र है। कोक पिओगे ?'

कहने के साथ ही यज्ञेश्वर ने आवाज़ लगायी, 'सूरज, इधर एक ठंडा ले आओ।' इसके बाद ही सहसा गम्भीर हो गया। थोड़ा इधर-उधर करने लगा। उसके बाद उसके कान के पास मुँह ले जाकर फुसफुसाकर बोला, 'एक उलझन में पड़ गया हूँ, भाई। एकदम निजी सलाह चाहता हूँ।'

वह बोला, 'भाई, तुम को तो मालूम है कि राजनीति में मेरी कोई दिलचस्पी नहीं है।'

यज्ञेश्वर झटपट बोल उठा, 'अरे नहीं-नहीं, कोई राजनीतिक मामला नहीं है।'

वह बोला, 'ट्रेड यूनियन के मामलों में मैं तुम्हें क्या सलाह दूँ

उन मामलों में तो तुम्हीं पारंगत हो।'

यज्ञेश्वर परेशान होकर बोला, 'अरे, वे सब बातें नहीं हैं। एक बिलकुल निजी और गोपनीय बात है। मैं क्या करूँ, वह बताओ। क्या क़दम मुझे उठाना चाहिए ?'

वह ताज्जुब में आ गया। बोला, 'तुम्हारी समस्या क्या है ? वह तो तुमने नहीं बतलायी।'

यज्ञेश्वर अब और परेशान लगने लगा। रूमाल से कई बार गरदन, पीठ और चेहरा पोंछा। रगड़-रगड़कर नाक-मुँह-कान लाल कर डाले। सिगरेट निकालकर उससे बोला, 'एक पिओ।' खुद एक सुलगायी। कई बार धुआँ छोड़कर साहस जुटाया। उसके बाद सचमुच बचपन की एक नाजुक-सी, एक बहुत सुन्दर मुसकराहट उस संघर्षशील मज़दूर-नेता के चेहरे पर खिल उठेगी, इसकी उसने आशा नहीं की थी। वह अवाक् होकर यज्ञेश्वर के मुंह की ओर देखता रह गया।

यज्ञेश्वर हिचकिचाहट के साथ बोला, 'मैंने सोचा था कि तुम लेखक हो, शायद समस्या को स्वयं भाँप सको। अमिय-दा ने कहा था कि विवाहित जीवन का भविष्य पहली रात को ही सब स्थिर हो जाता है। शादी की पहली रात को ही जो बिल्ली नहीं मार सकता वह ज़िन्दगी-भर पछताता है ! लेकिन भाई, मुझे सेक्स के सम्बन्ध में कोई भी जानकारी नहीं है। दो रातें खिसक गयीं। पहली रात तो ब्याह के झमेले में ही कट गयी। रात-भर औरतों ने जैसे घेराव कर लिया था। कैसा उपद्रव रहा। उसके बाद तो कालरात्रि थी। उस दिन एक-दूसरे का मुंह नहीं देखते। समझे, कैसी सड़ी-गली व्यवस्था है ! मैं कोई भी क़दम नहीं उठा सका, समझे न ? अमिय-दा ने कहा था कि वह ही मुझे सब रास्ते बता देंगे। लेकिन कल से उनके मुहल्ले में जो हालत शुरू हो गयी है। अमिय-दा एकदम लापता हैं। कल बम गिरा था, गोली चली थी, खून भी हुआ था। आज पुलिस, मिलिटरी ने मुहल्ला घेर लिया है। अमिय-दा ने ही मुझे डुबा दिया। मैं उन्हें दोष नहीं दे रहा हूँ। लेकिन मेरी समस्या समझ गये न ? दिस इज द

थर्ड नाइट[1] और अत्यन्त क्रूशल नाइट[2]। मैं अमिय-दा के पथ-प्रदर्शन के भरोसे चुप बैठा हूँ, क्या करूँ, क्या नहीं—समझ में नहीं आता।'

यज्ञेश्वर बहुत करुण हो रहा था। उसे उस पर बहुत प्यार आया। यज्ञेश्वर को नहलाकर, बदन पोंछ, दूध पिला, पेटी से कसी धोती पहनाकर उसके दूधिया गालों की कई चुम्मियाँ लेने की उसकी तबीयत हुई!

यज्ञेश्वर बोला, 'अमिय-दा तो कहकर छुट्टी पा गये, शादी की पहली रात बिल्ली मारना! बट हाऊ[3]?'

भुवन बाबू—यज्ञेश्वर के बड़े भाई—अचानक आकर बोले, 'जो लोग लड़की के घर से सामान वगैरह लेकर आये हैं उन्हें अपने बाहर के कमरे में जगह कर बैठाने का इन्तज़ाम कर दो।'

अनिच्छापूर्वक यज्ञेश्वर उठ खड़ा हुआ। उसके बाद उसकी ओर विपन्न भाव से देखकर बोला, 'अचानक चले मत जाना भाई, अब तुम पर ही भरोसा है।'

वह और केया : सभा-मंच पर

एक दृश्य :

वह और केया आस-पास दो कुर्सियों पर बैठे हैं। लेकिन दोनों देख रहे हैं अनगिनत अभ्यागतों की ओर। वे आपस में बातें कर रहे हैं, लेकिन सुनाना चाहते हैं दूसरों को। उन दोनों के आस-पास ब्याह के घर के लोगों का आना-जाना चल रहा है। वह इधर नज़र भी नहीं डालते।

केया : शचो इतना ड्रिंक क्यों करता है?

वह : केया ने यह सवाल मुझसे पहले भी पूछा था और तुमको वह

---

1. आज तीसरी रात है।
2. अत्यन्त संकटकाल की, निर्णायक।
3. लेकिन कैसे?

मालूम है। मुझसे बार-बार यह सवाल करने के माने क्या हैं ? केया क्या सोचती है कि शची के शराब पीने के बढ़ जाने में मेरा हाथ है ? केया का यह सवाल क्या मेरे विरुद्ध अभियोग-जनक है ? या, केया सोचती है कि शची की शराब के प्रति आसक्ति उत्तरोत्तर बढ़ने के लिए वह खुद ही ज़िम्मेदार है, और यही प्रश्न उसके खेद को प्रगट करता है ? आप क्या सोचते हैं ?

केया : शची से मैंने प्यार किया था। और प्यार कर ब्याह किया था। काम बहुत आसानी से नहीं हुआ। वह कई बरस पहले की बात है। तब शायद हमें स्वाधीनता मिलने-मिलने को हो रही थी। मैं क़ानूनन तभी बालिग़ हुई थी। शची की कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में तभी प्रकाशित होना शुरू हुई थीं। शची उन दिनों बहुत तेज़ स्वभाव का था और उसका कैसा तो उग्र और मोहक आकर्षण था ! वह जैसे अलिफ़-लैला वाला चुम्बक पत्थर का पहाड़ हो ! उसके समीप से जो जहाज़ निकलता उसका मानो जोड़-जोड़ खुल जाता। और मेरे पिता थे बहुत कड़ी नज़र रखने वाले और कठोर। शची मुझे बहा ले गया। पिता की लगाम मुझे रोक न सकी। इस सब मामले में जो प्रमुख गवाह और मेरे और शची के प्रधान सलाहकार थे वे आपके सामने, मेरी नज़दीक की कुर्सी पर बैठे हैं ! इस समय निर्विकार, निरासक्त, निर्विकल्प पुरुष की भूमिका में हैं। और अशान्ति की आग में मेरा और शची का जीवन धधक-धधककर जल रहा है ! जिनकी सक्रिय भूमिका में एक दिन हमारा जीवन शुरू हुआ था, आज बीच राह में आकर उसमें जब अनिश्चय दिखाई पड़ा, तो उनका क्या इस प्रकार निर्विकार रहना अच्छा लगता है ? और वह इस प्रकार निरासक्त रह ही कैसे सकते हैं ?

वह : तो यह अभियोग है !

केया : नहीं, एक सरल प्रश्न है। आशा है कि आप सब लोग मेरे साथ एकमत होंगे।

एक दूसरा दृश्य :

मैदान में गॉल्फ़ कोर्स के निकट किसी एक अपराह्न में—जो न बहुत

गरम है न बहुत ठंडा—वही लोग। तीन-चार आम के पेड़ों में कुंज ब
गया है। वे वही घास पर बैठे हैं। लेकिन एक-दूसरे की ओर देख न
रहे हैं, सीधे दर्शकों की ओर नजर किये हैं। दूर पर विक्टोरिया मेमोरिय
रोशनी में चमक रहा है। दूरी पर ही रेस मैदान की सफेद, निचले घेरे क
गतिशील वक्ररेखा है। गॉल्फ में मेम साहब लोग जाँघिये की तरह शॉर्ट
पहने, सुललित पद-पल्लवी प्रगट करती, इधर से उधर आ-जाकर गॉल
खेल रही हैं। कहीं-कहीं उनके नजदीक होकर परिचारक चले जा रहे हैं—
देर से पीठ पर गॉल्फ के डंडे-भरे तरकस बाँधे हुए। गाय-भैंसें चर रही है
कहीं अपने में खोये नये जोड़े, चींटियों की तरह चलती हुई ट्रामें और बसें

केया (अतीत की स्मृति से आच्छन्न) : यह कुंज शची को बहुत प्रि
था।

वह (अतीत की स्मृति में आच्छन्न) . केया के साथ उस समय भ
शची की बातचीत नहीं हुई थी। हम दोनों तब से ही यहाँ आकर बैठ
थे। शची आता और लेट जाता।

केया : घास का सिरा तोड़कर उसका अगला हिस्सा चबाता।

वह : उसकी स्मृति बहुत तेज थी। घंटों कविता की आवृत्ति करत
रहता। रवीन्द्रनाथ, जीवनानन्द, इलियट, ऑडेन। अमिय चक्रवर्ती—
मिलायेंगे वे मिलायेंगे। कैसे आश्चर्य की बात है, यह लाइन कितने दिन
बाद याद आयी। पता है, पता है कि आग के चक्र का घूमना है—शची
कहता, कौन बताओ तो ? मैं उत्तर न दे पाता। खुद ही वह कहता, विष्
दे। शायद ईश्वर नहीं है। खैर, सृष्टि आजन्म अनाथ, काल की अव्यक्
वृद्धि शृंखला के अभिव्यक्त ह्रास में—बताओ कौन है ? मेरे विमू
चेहरे की ओर देखकर शची मुँह दाबकर हँसता। सुधीन दत्त ! मूढ़
घोड़े घास खा रहे हैं कार्तिक की ज्योत्स्ना के प्रांतर में, प्रस्तर युग
घोड़ों के समान—अब भी घास के लालच में चरते हैं पृथिवी के असा
धारण आकार वाले डाइनासोर बाद में। आँखों में एक स्वप्न में डूबकर
प्रगाढ़ स्वर में शची कहता, जीवनानन्द। या कभी :

ओ डार्क डार्क। दे ऑल गो इन्टु द डार्क,
द वेकेंट इंटरस्टेल्लर स्पेसिज, द वेकेंट इन

मालूम है। मुझसे बार-बार यह सवाल करने के माने क्या हैं ? केया क्या सोचती है कि शची के शराब पीने के बढ़ जाने में मेरा हाथ है ? केया का यह सवाल क्या मेरे विरुद्ध अभियोग-जनक है ? या, केया सोचती है कि शची की शराब के प्रति आसक्ति उत्तरोत्तर बढ़ने के लिए वह ख़ुद ही ज़िम्मेदार है, और यही प्रश्न उसके खेद को प्रगट करता है ? आप क्या सोचते हैं ?

केया : शची से मैंने प्यार किया था। और प्यार कर ब्याह किया था। काम बहुत आसानी से नहीं हुआ। वह कई बरस पहले की बात है। तब शायद हमें स्वाधीनता मिलने-मिलने को हो रही थी। मैं क़ानूनन तभी बालिग़ हुई थी। शची की कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में तभी प्रकाशित होना शुरू हुई थीं। शची उन दिनों बहुत तेज़ स्वभाव का था और उसका कैसा तो उग्र और मोहक आकर्षण था ! वह जैसे अलिफ़-लैला वाला चुम्बक पत्थर का पहाड़ हो ! उसके समीप से जो जहाज़ निकलता उसका मानो जोड़-जोड़ खुल जाता। और मेरे पिता थे बहुत कड़ी नज़र रखने वाले और कठोर। शची मुझे बहा ले गया। पिता की लगाम मुझे रोक न सकी। इस सब मामले में जो प्रमुख गवाह और मेरे और शची के प्रधान सलाहकार थे वे आपके सामने, मेरी नज़दीक की कुर्सी पर बैठे हैं ! इस समय निर्विकार, निरासक्त, निर्विकल्प पुरुष की भूमिका में हैं। और अशान्ति की आग में मेरा और शची का जीवन धधक-धधककर जल रहा है ! जिनकी सक्रिय भूमिका में एक दिन हमारा जीवन शुरू हुआ था, आज बीच राह में आकर उसमें जब व्यतिक्रम दिखायी पड़ा, तो उनका क्या इस प्रकार निर्विकार रहना अच्छा लगता है ? और वह इस प्रकार निरासक्त रह ही कैसे सकते हैं ?

वह : तो यह अभियोग है !

केया : नहीं, एक संगत प्रश्न है। आशा है कि आप सब लोग मेरे साथ एकमत होंगे।

एक दूसरा दृश्य :

मैदान में गॉल्फ़ कोर्स के निकट किसी एक अपराह्न में—जो न बहुत

गरम है न बहुत ठंडा—वही लोग। तीन-चार आम के पेड़ों से कुंज बन गया है। वे वहीं घास पर बैठे हैं। लेकिन एक-दूसरे की ओर देख नहीं रहे हैं, सीधे दर्शकों की ओर नजर किये हैं। दूर पर विक्टोरिया मेमोरियल रोशनी में चमक रहा है। दूरी पर ही रेस मैदान की सफ़ेद, निचले घेरे की गतिशील वक्ररेखा है। गॉल्फ में मेम साहब लोग जांघिये की तरह शॉर्ट्स पहने, सुललित पद-पल्लवी प्रगट करती, इधर से उधर आ-जाकर गॉल्फ खेल रही हैं। कहीं-कहीं उनके नजदीक होकर परिचारक चले जा रहे हैं—देर से पीठ पर गॉल्फ के डंडे-भरे तरकस बाँधे हुए। गाय-भैंसें चर रही हैं! कहीं अपने में खोये नये जोड़े, चीटियों की तरह चलती हुई ट्रामें और बसें!

केया (अतीत की स्मृति से आच्छन्न) : यह कुंज शची को बहुत प्रिय था।

वह (अतीत की स्मृति से आच्छन्न) : केया के साथ उस समय भी शची की बातचीत नहीं हुई थी। हम दोनों तब से ही यहाँ आकर बैठते थे। शची आता और लेट जाता।

केया : घास का सिरा तोडकर उसका अगला हिस्सा चबाता।

वह : उसकी स्मृति बहुत तेज़ थी। घंटों कविता की आवृत्ति करता रहता। रवीन्द्रनाथ, जीवनानन्द, इलियट, ऑडेन। अमिय चक्रवर्ती—मिलायेंगे वे मिलायेंगे। कैसे आश्चर्य की बात है, यह लाइन कितने दिनों बाद याद आयी। पता है, पता है कि आग के चक्र का घूमना है—शची कहता, कौन बताओ तो? मैं उत्तर न दे पाता। खुद ही वह कहता, विष्णु दे। शायद ईश्वर नहीं है। खैर, सृष्टि आजन्म अनाथ, काल की अव्यक्त वृद्धि शृंखला के अभिव्यक्त ह्रास में—बताओ कौन है? मेरे विमूढ़ चेहरे की ओर देखकर शची मुँह दाबकर हँसता। सुधीन दत्त! मूढ़। घोड़े घास खा रहे हैं कार्तिक की ज्योत्स्ना के प्रांतर में, प्रस्तर युग के घोड़ों के समान—अब भी घास के लालच में चरते हैं पृथिवी के असाधारण आकार वाले डाइनासोर बाद में। आँखों में एक स्वप्न में डूबकर प्रगाढ़ स्वर में शची कहता, जीवनानन्द। या कभी :

> ओ डार्क डार्क। दे ऑल गो इन्टु द डार्क,
> द वेकेंट इंटरस्टेल्लर स्पेसिज, द वेकेंट इन्टु द वेकेंट,

वह (विलाप के स्वर में) : शची अब कविता नहीं सुनाता।

केया (विलाप के स्वर में) : शची ही मुझे यहाँ लाया था।

दोनों (एक साथ) : शची आज हमारे पास से दूर चला गया है। बहुत दूर। और हम कितने पास-पास रहते हैं!

केया : मैं उसके संसार में हूँ, उसके विस्तर पर।

वह : मैं और वह एक ही दफ्तर में है। मैं उसी के विभाग में, उसी के अधीन हूँ।

एक और दृश्य :

पार्क स्ट्रीट के बार में वे दोनों। काफी रात हो गयी है। उन दोनों ने शराब पी है। बीच-बीच में कैबरे की लड़की विरक्ति-मूलक गाने गाती है। बीच-बीच में रुक जाती है। वे उस असंतोष के समय में बातें करने लगते हैं। कोई किसी से बातें नहीं करता। वे दर्शकों को अपनी बातें सुनाते हैं।

वह (असहाय भाव से) : आप सब ही देख रहे हैं। आप साक्षी हैं। मैंने केया को शराब पीने से मना किया था। उसने फिर भी जबरदस्ती पी ली। सच कहने में क्या, मैं केया के इस बचकानेपन की जिद से बहुत ऊब उठा था। बहुत परेशान भी हो गया था। और तो और, एक वक्त बीता जा रहा था। लेकिन मैं जानता हूँ और आप भी देख रहे हैं कि तब वह एक हंगामा मचा देगी। इस वक़्त वह शान्त है, लेकिन गुस्सा हो जाने पर चांडाल बन जाती है। इसीलिए लाचार होकर मुझे हार माननी पड़ी और उसके साथ शराब भी पीना पड़ी। पर सच की खातिर यह भी स्वीकार करना होगा, मैं स्वीकार करता हूँ, मुझे इस वक़्त नशा हो रहा है, और बहुत अच्छा लग रहा है। केया की ओर आप लोग अच्छी तरह नजर डालकर देखें—उसकी दोनों आँखें एक रूपवान जलाशय का आभास दे रही है; उसका चेहरा कैसा तरल होता जा रहा है! उसका कठोर भाव सम्पूर्ण रूप से तिरोहित हो गया है। केया मेरी किशोर-अवस्था की मित्र है। आज इस भरे-पूरे मध्याह्न में वह जैसी सुन्दर लग रही है, ऐसी कभी नहीं लगी। मद्यपान किया है, क्या इसलिए? या

वह (विलाप के स्वर में) : शची अब कविता नहीं सुनाता।

केया (विलाप के स्वर में) : शची ही मुझे यहाँ लाया था।

दोनों (एक साथ) : शची आज हमारे पास से दूर चला गया है। बहुत दूर। और हम कितने पास-पास रहते हैं!

केया : मैं उसके संसार में हूँ, उसके बिस्तर पर।

वह : मैं और वह एक ही दफ्तर में हैं। मैं उसी के विभाग में, उसी के अधीन हूँ।

एक और दृश्य :

पार्क स्ट्रीट के बार में वे दोनों। काफी रात हो गयी है। उन दोनों ने शराब पी है। बीच-बीच में कैबरे की लड़की विरक्ति-मूलक गाने गाती है। बीच-बीच में रुक जाती है। वे उस असंतोष के समय में बातें करने लगते हैं। कोई किसी से बातें नहीं करता। वे दर्शकों को अपनी बातें सुनाते हैं।

वह (असहाय भाव से) : आप सब ही देख रहे हैं। आप साक्षी हैं। मैंने केया को शराब पीने से मना किया था। उसने फिर भी जबरदस्ती पी ली। सच कहने में क्या, मैं केया के इस बचकानेपन की जिद से बहुत ऊब उठा था। बहुत परेशान भी हो गया था। और तो और, एक वक़्त बीता जा रहा था। लेकिन मैं जानता हूँ और आप भी देख रहे हैं कि तब यह एक हंगामा मचा देगी। इस वक़्त वह शान्त है, लेकिन गुस्सा हो जाने पर चाडाल बन जाती है। इसीलिए लाचार होकर मुझे हार माननी पड़ी और उसके साथ शराब भी पीना पड़ी। पर सच की खातिर यह भी स्वीकार करना होगा, मैं स्वीकार करता हूँ, मुझे इस वक्त नशा हो रहा है, और बहुत अच्छा लग रहा है। केया की ओर आप लोग अच्छी तरह नज़र डालकर देखें—उसकी दोनों आँखें एक रूपवान जलाशय का आभास दे रही हैं; उसका चेहरा कैसा तरल होता जा रहा है! उसका कठोर भाव सम्पूर्ण रूप से तिरोहित हो गया है। केया मेरी किशोर-अवस्था की मित्र है। आज इस भरे-पूरे मध्याह्न में वह जैसी सुन्दर लग रही है, ऐसी कभी नहीं लगी। मद्यपान किया है, क्या इसलिए? या

इतने दिनों का एक आवरण उतारकर आज सहसा वह अपने रूप में निकल पड़ी है ? या कि जो व्यवधान मुझे और केया को आज तक बराबर ओट में रखे रहा—उस प्रथम वयस से ही—वह अकस्मात् ढह गया है और मैं पहले-पहल उसका अपूर्व रूप देख पा रहा हूँ ?

केया : यह मैं पहली बार ड्रिंक कर रही हूँ सो बात नहीं है। लेकिन बार में आकर खुल्लम-खुल्ला यह पहली बार ही पी है। यद्यपि जानती हूँ कि शची अगर आज की बात किसी तरह जान पाये, या इसका पता लगा ले कि मैंने उसकी बोतल से ही बीच-बीच में ड्रिंक करना शुरू कर दिया है तो उसे बहुत धक्का लगेगा। लगेगा न ? विचलित नहीं हो उठेगा वह ? पत्नी दूसरे पुरुष के साथ, चाहे वह अतीत का मित्र ही क्यों न हो, बार में बैठकर नशा करे, यह दृश्य देखकर कोई भी पति, वह खुद भी नशेबाज क्यों न हो, बिना विचलित हुए कैसे रह सकता है ? बताइये ! लेकिन मुझे डर नहीं। शची यहाँ आये, मुझे देखे, मैं तो यही चाहती हूँ। शची विचलित हो उठे, मैं तो यही चाहती हूँ। इस तरह की एक आकस्मिक दुर्घटना के प्रबल आघात से मेरे और शची के बीच खड़ी दीवार टूट जाये, चूर-चूर हो जाये, यही मैं चाहती हूँ। या तो हम निकट आ जायें, नहीं तो हम भी चूर-चूर हो जायें।

वह : किसी भी कारण से केया अपने को खोये दे रही है। अकसर वह ऐसी बातें कहती है, ऐसी रूठती है कि कोई मतलब समझ में नहीं आता। आज की बात ही लीजिये. जैसे वह यहाँ शराब पीने क्यों आयी ? मुझको ही क्यों खींच लायी ? सिर्फ़ एक जिद ? या वह कोई मतलब पूरा करना चाहती है ? मुझे क्या किसी बात में किसी तरह फँसाना चाहती है ? मैं होशियार हो जाऊँ क्या ? या मेरे प्रति आकृष्ट है ? बराबर ही उसने मुझे ही चाहा; मुझे नहीं जानने दिया; शायद पहले खुद भी न जान सकी हो—यह आज पहले-पहल जाना। सोचकर मुझे अच्छा लगता है। मैं किस तरह उत्तेजित हो रहा हूँ ! क्या मैं इस अवसर का लाभ उठाऊँ ?

केया : आदमी कितना बदल जाता है ! जैसा कि शची बदला है। जैसे कि बदला है यह आदमी, जो मेरे पास बैठा है। इसकी आँखों और

कर शची ने प्रतिष्ठा पायी। न, उसने उसे प्राप्त किया था। था तो कवि; अब वह एक बड़े औद्योगिक प्रतिष्ठान का उच्च अफ़सर है। फिर भी उसे सुख नहीं है। मेरा जरूर कोई प्रमोशन नहीं हुआ। मैं अब भी शची की पत्नी हूँ, मिसेज बाग्ची। हमारे अन्दर जो एक-दूसरे के लिए आकर्षण था, वह धीरे-धीरे ठंडा पड़ गया। बहुत समय बाद, आज फिर वही आकर्षण, वही चांचल्य, वही अजीब-सी अस्थिरता मन में जाग रही है।

वह : मैं केया का हाथ जरा पकड़ता हूँ, यह प्रगल्भता है क्या ? मैंने कभी केया का शरीर स्पर्श नहीं किया। आज सिर्फ़ उसका हाथ अपने हाथों में ले लिया। कैसा आश्चर्यजनक, कोमल स्पर्श है ! मीनू के हाथ क्षत-विक्षत हैं। गृहस्थी के कामों ने उसकी हथेलियों की कमनीयता को बिलकुल छील डाला है। बेचारी !

मृत ससुर के साथ उसका कथोपकथन

वे दोनों, वह और मीनू, जब गरियाहाट पुल पर खड़े आसमान की धुँधली शोभा में स्वप्न देख रहे थे, और मीनू उसके शरीर से शरीर टिकाकर कह रही थी, 'पता है ? यह है चन्द्र-मंडल—इसके अर्थ हैं कि वर्षा होगी,' तभी एक अलौकिक बात हो गयी। एक हलका-सा बादल चाँद के ऊपर से हटा जा रहा था और दूसरी ओर से एक घना बादल उसे ढक देने के लिए तेजी से बढ़ा आ रहा था। आखिर मेघ ने चन्द्रमा को ढक दिया। उसके बाद सहसा उसे पुकारा, अरे बाबाजी, तुम कैसे हो ? वह खुश होकर बोला, अच्छा हूँ। आपकी क्या खबर है ? मेघ बोला, अच्छी है। उसके बाद, मीनू माँ की कैसी खबर है ? वह हँसकर बोली, यह पास ही तो खड़ी है। मीनू, तुम्हारे बाबा।

मीनू सुन नहीं पायी। बोली, नदी में बान[1] पुकारेगा। चन्द्र-मंडल होने से बान पुकारेगा।

---

1. नदी इत्यादि में पानी का बढ़ आना।

वह घबराकर मीनू से कहने लगा, 'मीनू, तुम्हारे बाबा...', लेकिन देखा कि मीनू उसे ठेल रही है।

वह बोला, 'बाप रे, सचमुच बहुत डर गया था।'

मीनू बोली, 'बीच-बीच में क्या तुम्हारे बाह्यज्ञान का लोप हो जाता है? सिर पर आसमान फट नहीं पड़ा, यही ख़ैरियत है!'

उसने मीनू के दोनों खुरदरे हाथों को थप से दबा लिया और बोला, 'मीनू, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। और भी करूँगा।'

मीनू का चेहरा करुणा से भीग आया। बोली, 'वह सब बाद में होगा, अभी चले चलो, बरसात पड़ने लगेगी।'

उसने मीनू के हाथ को दाबकर बड़े विश्वास के साथ उससे कहा, 'मैं अगर सचमुच तुम्हें प्यार करता हूँ तो बरसात न होगी! कम-से-कम यह बादल हमें मुसीबत में न डालेगा। तुम देख लेना।'

उसने ऊपर नज़र डालकर देखा। बादल उन्हें छोड़कर बहुत दूर चला गया था। वह मन-ही-मन बोला : मीनू ने कुछ न जाना।

मीनू बोली, 'देखा, पुल बिलकुल खाली है।'

तभी चन्द्रमा के चारों ओर इन्द्रधनुष का घेरा फिर खिलकर निकल आया।

वह केवल बोला, 'देखो, देखो, मीनू, आकाश की ओर देखो। यह अपूर्व शोभा शायद जल्दी मिट भी जायेगी।'

बादलों के बेड़े पर वह और मीनू

उसने मीनू के हाथ अपने हाथों में ले लिये। आकाश में तब तक बादल का बड़ा-सा टुकड़ा बहुत दूर चला गया था। इस समय उसका पीछा कर रहे हैं हलके-हलके, फीके-फीके, तरह-तरह के बादल। कुछ देर देखते रहने पर भ्रम होता है कि वे ही बादलों के बेड़े पर तैर रहे हों! उसे मीनू की दोनों हथेलियों का अहसास भी हो रहा था। कैसी कटी-फटी खुरदरी हैं! केया की हथेलियाँ मक्खन-सी चिकनी हैं। यज्ञेश्वर आज रात पत्नी की

... ल हथेलियों का सुखप्रद स्पर्श पायेगा। और केया की वह कोमलता कभी नहीं मिटेगी।

वह आवेग में भरकर बोल उठा, 'मीनू, अब मैं तुम्हें बर्तन माँजना, कपड़े धोना—ये सब काम न करने दूँगा।'

मीनू बोली, 'पता है, आज किस तरह बाबा की बात याद आ रही है?'

वह बहुत अधिक डर गया। साथ-ही-साथ उसने आसमान की ओर देखा। न, कोई नहीं है।

वह परेशान होकर बोला, 'प्लास्टिक सर्जरी की आजकल जो उन्नति हुई है, पता है, तुम्हारी दोनों हथेलियाँ आसानी से पहले की ही तरह की जा सकती हैं।'

मीनू बोली, 'जानते हो, बाबा की इच्छा थी कि मेरी शादी भी खूब धूम-धाम से करेंगे।'

वह क्रमशः भड़कने लगा।

झटपट बोला, 'तुम कुछ मत सोचो। मैं वचन देता हूँ कि तुम्हारे मुलायम हाथ मैं फिर तुम्हें लौटा दूँगा।'

मीनू बोली, 'बाबा ने सब तरह की दान-सामग्री खरीदकर रख ली थी। मेरे लिए अलग, छुटकी के लिए अलग।'

वह बोला, 'आजकल तरह-तरह के लोशन भी आते हैं, समझी। हम लोग न्यू मार्केट जाकर तलाश कर सकते हैं।'

मीनू बोली, 'बाबा तो पुराने किस्म के आदमी थे। गहना, दहेज, लड़की के सुख के लिए, उसका मान बनाये रखने के लिए ये सब देना उचित समझते थे—कर्तव्य मानते थे।'

वह बोला, 'विलायती चीजें भी बहुत मिलती हैं, समझी। इसके सिवा भी तुम एक काम कर सकती हो। सवेरे बोतल में जो दूध आता है, उसका मक्खन तुम हाथ में मल सकती हो, कच्ची हल्दी के साथ अच्छी

तरह पीसकर। या फिर नीबू के छिलके अच्छी तरह हाथ में रगड़ सकती हो। दस मिनट नीबू के छिलके हाथ में घिसो, उसके वाद एक वर्तन में ठंडा पानी डालकर वैठी रहो। उसके वाद रात को अंडे की सफ़ेदी के साथ थोड़ा-सा वोरिक अथवा सोडा-वाइकार्व मिलाकर लगाओ और हाथ सुखाकर सो जाओ। इससे होता क्या है कि दिन-भर कड़ा काम करने से जिस तरह टिशू निस्तेज हो जाते हैं, वे सव फिर ज़िन्दा हो जाते हैं, और हाथ का स्वास्थ्य और लावण्य फिर लौट आता है।'

मीनू वोली, 'लेकिन तुमने ज़िद पकड़ ली कि तुम कुछ न लोगे। तुमने ज़िद की कि शादी रजिस्ट्री से होगी। मेरे वावा तो किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये थे! मंत्र नहीं पढ़े जायेंगे! सात फेरे नहीं होंगे! अग्निसाक्षी, वरण—कुछ भी न होगा! यह भला किस तरह की शादी हुई?'

वह वोला, 'हाँ, मुझसे भी यही कहा था, यह कैसी शादी है!'

मीनू वोली, 'वावा कुछ डर भी गये थे।'

वह वोला, 'हाँ, मुझसे भी वही कहा था—अगर मेरी लड़की को कुछ दिनों वाद छोड़कर भाग जाओ, तो? मैं वोला—पत्नी को छोड़कर अगर चला जाऊँगा तो फिर शादी ही क्यों कर रहा हूँ?'

मीनू वोली, 'उसके वाद? वावा क्या वोले?'

'वोले—हाँ, वह तो है। मैं वोला—सिर्फ़ यही नहीं, मंतर वाला व्याह करके भी अगर छोड़कर चला जाऊँ, तो?'

मीनू वोली, 'फिर? वावा क्या वोले?'

'वोले—हाँ, वह तो है। मैं वोला—इसमें तो गवरमेंट के खाते में दोनों के दस्तख़त रहेंगे। भाग जाने पर भी निस्तार नहीं। पुलिस के प्यादे भेजकर आपकी लड़की या आप जव चाहें तव मुझे वँधवाकर घर मँगवा सकते हैं।'

मीनू हँसने लगी। वोली, 'हमारे ज़िम्मे पड़ा वँधवा कर मँगाना!' उसके वाद हँसते-हँसते वोली, 'सुनकर वावा क्या वोले?'

'ताज्जुव में आकर वोले—सच! रजिस्ट्री की शादी ऐसी सख़्त होती है? मैंने कहा—जी हाँ, तीन क़ानूनों के फेरे सात फेरों से भी सख़्त फेरे होते हैं। फिर देखिये, ख़र्चा कम। लड़की के पिता के झमेले कितने कम

हो जाते हैं।'

मीनू हँसी। बोली, 'हाँ, बाबा तुम्हारी बात से बहुत निश्चिन्त हो गये थे। घर लौटते ही माँ से कहा था, लड़का भला है, पर...'

उसने पूछा, 'फिर ? क्या बोले ?'

मीनू बोली, 'कहा, मुझे लगता है कि दिमाग कुछ खराब है।'

वह बोला, 'हटो।'

'मैं क्या झूठ बात कह रही हूँ ? तुम्हारी तरह मैं गढ़कर बातें नही कह सकती।'

वह खिन्न होकर बोला, 'तुम्हारे पिता के प्रति मुझे श्रद्धा थी।'

मीनू उससे बिलकुल सटकर खड़ी हो गयी। उसके बाद उसे आश्वासन दिया, 'बाबा तुम्हें बहुत चाहते थे।' उसके बाद बहुत धीमी आवाज में बोली, 'मैं भी तुम्हें प्यार करती हूँ। मुझे क्या लगता है, पता है ? हम दोनों बहुत ही बुद्धू हैं। मैं तो गाँव की लड़की हूँ। लिखना-पढना नहीं जानती, बड़ी-बड़ी बातें नही बना सकती, फिर भी मैं तो तुम्हारी बातो में आकर इस तरह ब्याह करने को तैयार हो गयी थी। गहनों का लालच नही किया; फर्नीचर का लालच नही किया। मैं भी अगर इस तरह कर सकती हूँ तो पढी-लिखी लड़कियाँ क्यों नहीं कर सकतीं ?'

उसने खुश होकर मीनू के दोनो हाथ पकड़ लिये। बोला, 'मीनू, तुम्हारी हथेलियाँ मैं ठीक कर दूँगा।'

मीनू ताज्जुब में आकर बोली, 'क्यो, मेरी हथेलियों को क्या हो गया है ?'

वह अधीर आवेग के साथ बोला, 'तुम्हारे हाथों में मैं सौदर्य के फूल खिलाऊँगा। शची की पत्नी केया के...', केया का नाम याद आते ही एक घूंट भरा..., 'दोनों हाथ जिस तरह स्वास्थ्य से सौदर्यपूर्ण है, तुम्हारे हाथ भी मैं वैसे ही...।'

उसकी बात काटकर मीनू बोली, 'लेकिन बाबा ने बहुत गलत नहीं कहा था—तुम्हारे दिमाग में सचमुच कुछ खराबी है।'

एंड ऑर्डर'[1] का क्रम बदलकर पहले ऑर्डर और बाद में लॉ में लाना पड़ेगा। अर्थात् कानून और व्यवस्था नहीं, व्यवस्था और कानून ! नहीं तो समस्या का समाधान नहीं हो सकता—शान्ति-स्थापना नहीं हो सकती। यज्ञेश्वर बहुत विरक्त होकर बोला, 'एक शादी अगर इतनी समस्याएँ पैदा कर सकती है, यह मालूम होता तो शादी ही न करता !'

यज्ञेश्वर के बड़े भाई के दोस्त बोले, 'वह मुहल्ला छोड़ आया, अच्छा ही हुआ। उस तरह रहने के कोई अर्थ होते हैं ? पहले दिन तेरे घर जाकर तो मैं घबरा ही गया था। नीचे पुलिस। दोमंजिले पर ताला। सोचा, बात क्या है ! भुवन क्या फिर भूमिगत हो गया ? कांग्रेसी प्रजातन्त्र पर तो विश्वास नहीं किया जा सकता !'

यज्ञेश्वर अपने भाई के मित्र से बोला, 'वह सुना था। असल में दादा के लिए ही हमें बहुत फ़िक्र हुई थी। हमारे कॉमरेड पक्की खबर लाये थे। दादा का नाम उनकी सूची में आ गया था।'

यज्ञेश्वर के भाई के मित्र बोले, 'एस० बी० ने चेतावनी नहीं दी ?' यज्ञेश्वर बोला, 'उन्होंने ही तो पहले बताया।' यज्ञेश्वर के भाई के मित्र ने कहा, 'उसके बाद शायद केन्द्रीय पुलिस की हथियारबन्द टोली भेज दी।' यज्ञेश्वर बोला, 'दादा जरूर नहीं चाहते थे।' यज्ञेश्वर के भाई के मित्र बोले, 'समाजविरोधियों से आत्मरक्षा के लिए हथियारबन्द संरक्षकों की जरूरत होती है।' यज्ञेश्वर बोला, 'उस मुहल्ले के ऑफ़िसर-कमांडिंग ने इस मामले में हमेशा सहयोग दिया। दादा ने उनसे कह दिया था, पुलिस देना चाहें तो दें, लेकिन खबरदार, केन्द्र की पुलिस मेरे घर की चौहद्दी में न आये। दादा को तो जानते हैं, किस तरह के अडिग सिद्धान्तवादी आदमी हैं। हमारे कॉमरेड भी मुस्तैद थे। पर उस दिन अमिय-दा ने कहा था, उस मुहल्ले में हमारी नींव कुछ कमजोर हो गयी है। पुलिस के एक अफसर ने प्रशासन के एक अफसर से कहा था—सर, यह देखिये, एक मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले में आना-जाना कम होता जा रहा है। यह, सर, सेमी-इमर्जेन्सी का बहुत साफ़ लक्षण है। इसका नतीजा है कि लोगों के मन में शक-सन्देह

---

1. क़ानून और व्यवस्था

...जा रहे हैं। इसका नतीजा है कि खुफ़िया खबरों का स्रोत सूखता ...हा है। भुवन बाबू एक संघर्षशील मन्त्री से बोले—अमिय भी इसी ...र्प पर पहुँचा है। वह उस दिन आये थे, समझे ? कह गये, हमारे चले ... के परिणामस्वरूप कॉमरेडों की नैतिक शक्ति में बहुत-कुछ ह्रास हो ...या था। सिर्फ़ चार लड़कों ने आकर हमारे घर के पास के पार्टी ऑफ़िस ... जला दिया था।' भूतपूर्व मन्त्री बोले, 'दुःख की बात तो यह है कि ...लिस अब उस तरह सहयोग नहीं देती।' भुवन बाबू बोले, 'मैंने अमिय से ...हा था कि मामले को पूरे परिप्रेक्ष्य में रखकर देखना पड़ेगा। एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे—इस नीति के जनक तो स्वयं लेनिन थे। उसके बाद अमिय ज़रूर शान्त हो गया।' प्रशासन के अधिकारी पुलिस के एक नये अफ़सर से बोले, 'तुम्हारी उम्र कम है, इसीलिए आसानी से घबरा जाते हो। लॉ ऐंड ऑर्डर का प्रश्न अपनी परम्परा से हटाकर देखना सम्भव नहीं है। हमारी परम्परा क्या है ? रामायना ऐंड महाभारता ! नरमेध, नरबलि, दीज़ सॉर्ट्‌स ऑफ़ थिंग्ज़।[1] तुम कल के आई० पी० एस०, तुम छोकरों के चाहते ही यह सब बन्द हो जायेगा ?'

छकू बख्शी परेशान-सा आकर बोला, 'चलिये, जगह हो गयी।' भुवन बाबू बोले, 'आप लोगों को, लगता है, देर हो गयी !' प्रशासन के अधिकारी बोले, 'बेटर लेट दैन नेवर।'[2] सब लोग ज़ोरों से हँस पड़े। वह उठते-उठते केया से बोला, 'पता है केया, हँसी का यह एक झोंका ही सारे तनाव को उड़ा ले गया।' केया बोली, 'ठेंगा !'

हैवलॉक एलिस, कामसूत्र और मार्क्स : क्या राह ?

शची ने कहा कि वह उन्हें एस्प्लेनेड तक छोड़ देगा। मीनू राज़ी न शची आज अच्छे मूड में है। 'एक दिन आओ न दोनों। नया मकान तो देखा ही नहीं।' केया और वह एक-दूसरे को देखने लगे। मीनू तु...

1. इसी प्रकार की बातें
2. देर आयद दुरुस्त आयद

उठी, 'उधर से इधर जितनी दूर है, इधर से उधर भी उतना ही।' शची सब को ताज्जुब में डालते हुए हँस पड़ा। बोला, 'मीनू डार्लिंग, तुम्हारे साथ मेरा मेल कहाँ है, जानती हो ? इसी तरह हम दोनों खूब सच्ची, अच्छी-बुरी, इच्छा-अनिच्छा को अकपट भाव से प्रगट कर देते हैं। छल-कपट से मैं घृणा करता हूँ। तुम्हे पता है, तुम्हारे पति के साथ अब मेरी बोलचाल भी नहीं है। आई हेट हिम समटाइम्स[1]।'

मीनू बोली, 'फिर गाड़ी में जो बहुत ले जाना चाह रहे थे ! मैं जिस चीज को पसन्द नहीं करती उसकी छाया के पास भी नहीं जाती।'

शची 'हो-हो' कर हँस पड़ा। आज कुछ देर से उसे वैसा बुरा नहीं लग रहा है न, इसीलिए। 'तुम, आई मस्ट से[2], मुझसे भी ज्यादा ऑनेस्ट[3] हो। आओ न एक दिन ! तुम्हें और भी कम्प्लीमेंट[4] दूंगा। न, सचमुच ! एक दिन आओ। हमारा मुहल्ला इज ऐब्सोल्यूटली फ्री ऑफ एनी ट्रबल[5]।'

केया और शची बाहर चले गये—शची हँसते-हँसते—केया शान्त। वह बोला, 'तो चलो, हम भी चलें।'

मीनू बोली, 'लेकिन बहुत खिलाया। मास किस चीज का था, बताओ तो ?'

वह ताज्जुब में आ गया, 'क्यों ? बकरे का !'

केया बोली, 'हटो, मैं भी वही सोचती हूँ। हिन्दू के घर में क्या और कुछ देंगे ? पर होटल में होने से मुझे बहुत हिचकिचाहट होती।'

वह बोला, 'तुम भी अजीब हो ! अरे यह था ग्राम-फेड बकरा[6], रेआला का गोश्त। स्पेशल टाइप। चलो चलें।'

---

1. मैं तो कभी-कभी उससे घृणा भी करता हूँ।
2. मैं दावे से कहता हूँ
3. ईमानदार
4. प्रशस्ति
5. किसी भी प्रकार की गड़बड़ से मुक्त है।
6. बकरा जिसे चना खिलाया जाता है—खास अच्छा गोश्त

यज्ञेश्वर हाँफते-हाँफते आकर रास्ता रोक खड़ा हो गया। दिन-भर के परिश्रम से उसका चेहरा, आँखें इसी बीच पिचक गये थे। मीनू से बोला, 'भाभीजी प्लीज़, कुछ खयाल नहीं करेंगी। दादा (यज्ञेश्वर कितना नर्वस था वह समझ में आया उसके पहले-पहल इस तरह दादा कहने पर) के साथ मेरी एक बहुत निजी बात है। खास जरूरी, प्लीज। आप आइये न भाभीजी, रत्ना के साथ कुछ बातें करें। अब भीड़ नहीं है। आपको बहुत देर न रोकूँगा भाभीजी, आइये!' जल्दी से मीनू को लेकर चला गया और फ़ौरन लौट आया। बोला, 'आओ मेरे साथ।'

यज्ञेश्वर उसे मंडप से निकालकर सीढ़ी से दोमंजिले पर ले गया। उसने जाते-जाते देखा, एक आदमी मंडप से उसे प्रायः धक्का दे बाहर आकर एक टोकरी-भर जूठे गिलास-प्याले फेंक गया। एक कुत्ता चिल्ला उठा। कई भिखारी उस पर एक साथ टूट पड़े। तब शहनाई में पीलू राग की ठुमरी की तान लहरा रही थी।

यज्ञेश्वर का किसी भी ओर ध्यान न था। वह मानो डूब रहा था और उसे तिनके का सहारा मिल गया हो! कमरे में घुसते ही उसने धड़ाम से दरवाज़ा बन्द कर दिया। फूल-शैया का कमरा, रोशनी में नये सामान—सब चमक रहे थे। अलमारी, ड्रेसिंग टेबल, अच्छे-से शेड का टेबल लैम्प था। सहसा पूरे साइज़ का ड्रेसिंग आईना सामने दीख पड़ा। अभ्यासवश दाँत साफ़ हैं या नहीं, यह जल्दी से देख लिया। उसकी यह आदत बस के आईनों में मुंह देख-देखकर पड़ गयी थी। मौक़ा मिलते ही आईने के सामने दाँत निकाल देता। यज्ञेश्वर की नज़रों से नजर मिलते ही झट से आँखें फेरकर छत की ओर देखने लगा। फूल! पूरी छत से गुच्छे-के-गुच्छे फूल झूल रहे थे। लाल, सफ़ेद, पीले, गुलाबी, बैंजनी—रजनीगन्धा, पद्म, गुलाब। बिस्तर पर फैला बहारदार बॉम्बे डाइंग का बेड-कवर। झक-झका कर रहा था, सिरहाने पर एक जोड़ा तकिया! बीच के दो बड़े-बड़े तकिये डबल बेड की सीमा का निर्देश कर रहे थे।

यज्ञेश्वर बोला, 'बैठो।'

वह बैठ गया। डनलपिलो के सुखद सहारे से उसके नितम्ब-प्रदेश मे सिहरन हुई।

यज्ञेश्वर झप से उसके पास बैठ कोई भूमिका बांधे बिना उसके दोनों हाथ दबाकर बोला, 'दादा, कुछ उपाय बताओ। लगता है, मुझसे कुछ न होगा।'

वह कहने जा रहा था—यज्ञेश्वर, उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्...।

उसके पहले ही यज्ञेश्वर बोल उठा, 'कल इस तरह का भद्दा काम हो गया, माने, मैं कर बैठा...!'

यज्ञेश्वर चुप हो गया। उसकी आँखों और चेहरे का भाव देखने से ही लग रहा था कि उसे बहुत तकलीफ हो रही है।

यज्ञेश्वर बोला, 'अच्छा, तुमने हैवलॉक एलिस पढ़ा है ? कामसूत्र ? इन सब किताबों में क्या सचमुच स्त्री को, यानी...।'

यज्ञेश्वर के कान और चेहरा लाल हो गये।

वह फिर बोला, 'खुश करने के...।'

यज्ञेश्वर जैसे गहरी साँस छोड़कर मुक्ति पा गया। मुँह की बात छीनकर बोला, 'हाँ-हाँ, खुश करने की कोई यथार्थ राह दिखायी है, या केवल तात्विक आलोचना है ?'

वह बोला, 'मैंने वे सब किताबें आँखों से देखी तक नहीं हैं।'

यज्ञेश्वर ताज्जुब में पड़ गया। 'सच ! सच कह रहे हो ? तब तुम लेखक लोग इन सब बातों पर लिखते किस तरह हो ?' यज्ञेश्वर ने हताश भाव से एक गहरी साँस छोड़ी। इसके बाद रुँधे गले से बोला, 'अच्छा यौन-कमजोरी को हटाने के लिए हर रास्ते पर जो बड़े-बड़े साइनबोर्ड लटके रहते हैं उन पर क्या भरोसा किया जा सकता है ? सचमुच क्या वे पुरुषों की दुर्बलता हटा सकते हैं ?'

वह बोला, 'क्या पता भाई, मैं तो उधर कभी जाता नहीं। जाने की

कहूँ। यज्ञेश्वर बाबू के नेतृत्व में उन्हें हमने साठ घंटों तक रोक रखा था। मिस्टर घारिया की पत्नी, बाल-बच्चों ने आकर बहुत चिरौरी-विनती की। यज्ञेश्वर बाबू नहीं टले। बोले—इस समय हम संघर्ष में लगे हैं। या तो हम जीतेंगे या वह। हमें इस समय जीतने के सिवा दूसरा रास्ता नहीं है।

(वह बोला : पाठको ! जिन गवाहों को यहाँ बुलाया गया, आप सब लोगों ने देखा कि वे समाज के विभिन्न स्तर के लोग हैं। यज्ञेश्वर को वे बहुत दिनों से जानते हैं। इसीलिए मैंने इनकी गवाही को इतना महत्व दिया। इनकी गवाही से यज्ञेश्वर का जो स्वरूप निकला है, देख तो रहे हैं सुधी पाठको और सुशील पाठिकाओ, उसके साथ इस समय के यज्ञेश्वर में, जो हमारे सामने फूल-शैया पर जुड़े पलंग पर भय और दुर्भावना में बिलकुल बत्ती की तरह बुझा जा रहा है, कोई मिलान नहीं है, और इस तरह का आदमी अकारण या सामान्य कारण से हार मान लेने वाला लड़का भी नहीं है। इसीलिए उसकी इस तरह की हालत देखकर मैं सचमुच उद्विग्न हो गया।)

यज्ञेश्वर हताश भाव से बोला, 'फिर दादा, मेरे तो बारह बज गये ! लगता है कि मैं अपनी पत्नी को कोई सुख न दे सकूँगा। मैं, मैं-मैं दादा, ज़रूर ही असफल रहूँगा। और छिपाने से क्या होगा ? तुमसे साफ़-साफ़ कह रहा हूँ।'

यज्ञेश्वर फिर बोला, 'कल अकेले-अकेले लेटा था। लेटे-लेटे बासरघर की बात सोचते-सोचते, लगता है, नींद आ गयी। स्वप्न में बासरघर जीवन्त हो उठा। वही औरतें, उनका छूना-छाना...बड़ी उत्तेजना हो आयी। और उसी उत्तेजना में एक भद्दा काम हो गया।'

यज्ञेश्वर इस बार अधीर होकर बोल उठा, 'जितनी रात बीत रही है, मैं उतना ही डर के मारे सूखता जा रहा हूँ। पूरे वक़्त काम में अपने को डुबाये रखकर मामले को दबाये रखा था। अब ? क्या करूँ, बताओ !

उसके आमने-सामने होने में भी मुझे डर लगता है। फिर अगर वैसी ही भद्दी बात हो जाये तो ?'

यज्ञेश्वर की यौन-शिक्षा

वह बोला, 'वत्स यज्ञेश्वर, तुम्हारी जो समस्या है उसमें हैवलॉक एलिस या कामसूत्र या तमाम चिकित्सकों ने यौन-दुर्बलताओं की मरम्मत करने के लिए बड़े-बड़े साइन-बोर्ड लटकाकर कारखाने खोल रखे हैं, उनमें से कोई भी राह दिखा पायेंगे या नहीं, मुझे शक है।'

यज्ञेश्वर आँखें फाड़े देखते हुए बोला, 'तो क्या कोई उपाय नहीं है ?'

वह बोला, 'वत्स, हताश क्यों होते हो ? तुम्हारा जो संकट है, वह मूलतः आत्मविश्वास का संकट है। इसीलिए सबसे पहले तुम्हें आत्म-विश्वास लौटाना होगा। और एकमात्र द्वन्द्ववाद ही इस युग में निराश लोगों की आशा है, निर्बल लोगों के लिए बल है। इसीलिए मुझे लग रहा है कि तुम कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो का अध्ययन करो ! तुम्हारे दाम्पत्य जीवन में सार्थकता अवतरित होगी।'

यज्ञेश्वर बोला, 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो ! बात क्या है—साफ-साफ बताओ, भाई। मैंने तो कभी उस चीज की शक्ल तक नहीं देखी है, लेकिन कभी दादा के मुँह से बीच-बीच में उसके बारे में सुना जरूर है।'

वह बोला, 'वत्स यज्ञेश्वर, कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो क्या है, यह जाने बिना जब इतने दिन तुम्हारा काम मजे में चलता रहा तो इस आपात-कालीन क्षण में उसे जानने की जरूरत नहीं है। सिर्फ तुम्हारी आज की आत्मगत और विषयपरक मनोस्थिति के लिए जितने की जरूरत है वही बताता हूँ। महामति मार्क्स ने इतिहास का विश्लेषण कर देखा था कि मानव के विकास और उसकी प्रगति के मूल में समाज के आर्थिक स्वार्थ के विभिन्न स्तरों में निरन्तर द्वन्द्व है। इस द्वन्द्व का बीज सामाजिक संगठन में निहित है। सभी सामाजिक संगठन विशेष दशाओं में विशेष भूमिका अदा करते हैं। उसके बाद वे स्वयं ही अपनी विरोधी-शक्ति को जन्म देते हैं और अपने ही विनाश का कारण बन जाते हैं। इस द्वन्द्व में

है एक नवीन शक्ति, नये ढंग का सामाजिक संगठन। यह गति, यह चक्र अनिवार्य है। इसी प्रकार समाज सामन्तवाद से पूंजीवाद में पहुंचा। इसी प्रक्रिया और राह से आगे समाजवादी संगठन में पहुंच जायेगा। मार्क्स ने कहा है, सर्वहारा की विजय अवश्यभावी और अनिवार्य है। विजय अनिवार्य है—यह आशा की उक्ति ही विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। यही अन्ततः तुम्हें, मुझे, सभी को—केवल जीत की ओर ढकेलकर लिये चल रही है। अतएव यज्ञेश्वर, इतिहास की अमोघ गति के साथ वह चलो। क्लैव्य छोड़ो। रात्रि के संग्राम के लिए इतिहास की ओर देखकर अपने को प्रस्तुत करो। निश्चय ही विजय प्राप्त करोगे।

'वत्स, अब दूसरा सूत्र लो : व्यक्तिगत पूंजी और सत्ता के बीच के घने आन्तरिक सम्बन्ध। महामति मार्क्स के पहले यह सत्य इस प्रकार किसी ने उठाया था—अपनी व्यक्तिगत पूंजी से पूंजी का निजी अंग भी अभिप्रेत है। अपनी शक्ति का वहां प्रयोग करो। आन्तरिक अन्तरंग सम्बन्ध पैदा हो जायेंगे। यह गति और चक्र भी अनिवार्य है।'

वह फिर बोला, 'यज्ञेश्वर, निजी अंगों की बात समझते हो न ! या उसकी व्याख्या की भी जरूरत है ?'

यज्ञेश्वर जोश में आकर बोला, 'अरे, नहीं-नहीं। तुम मुझे इतना बच्चा मत समझो। आन्तरिक सम्बन्ध, निजी अंग, ताक़त, शक्ति ! अब यह बात मेरे आगे पानी की तरह साफ़ हो गयी है। भाई, मुझे सचमुच बल मिल रहा है ? विजय अवश्यम्भावी है ! उफ़, मार्क्स में इतना कुछ है !'

वह बोला, 'एक और अचूक बात है। तुम्हारे काम आयेगी। उद्देश्यों की पूर्ति इस समय उपयोग में आ रहे सब आवरणों को बलात् उतार फेंकने पर ही होगी।'

वह आगे बोला, 'यज्ञेश्वर, तुम इससे अधिक यथार्थवादी और कौन-सा रास्ता चाहते हो ?'

यज्ञेश्वर विस्मय से अवाक् होकर कुछ देर बैठा रहा। फिर बोला, 'कैसी ताज्जुब की बात है !'

वह बोला, 'सखे यज्ञेश्वर, यह तो हुआ मार्क्स। इसके बाद है माओ।

वह तो है घाते में। उसका ब्रह्मवाक्य है : ताकत आती है बन्दूक की नली के मुँह से ! नली ही शक्ति का स्रोत है। अतएव उठो, जागो ! शक्ति के उत्स को जाग्रत करो !'

पुल पर वह, मीनू और वे

मीनू उसकी ओर देखकर हँसी। बोली, 'जो भी कहो, मैं आज तुम पर बहुत खफा हो गयी थी। तुम्हारा क्या ? मुझे औरतों में छोड़कर तुम बाहर खूब अड्डा जमाकर बैठ गये !'

वह मुसकराया। बोला, 'मैं तो समझा था कि तुम्ही शायद वहाँ अड्डा जमाये हुए हो ! और बाहर अकेले बैठे-बैठे मैं शामियाने का रंग देख रहा हूँ, और आहें भर रहा हूँ !'

मीनू बोली, 'तुम अकेले बैठकर आहें भरने वाले आदमी हो ? दोस्त की बीवी का साथ छोड़ते तो पल-भर नहीं देखा। ऐसी क्या बातें हो रही थीं ?'

वह बोला, 'शची बहुत ज्यादा शराब पीता है। केया उससे बहुत चिन्तित है।'

मीनू बोली, 'तुम्हारे दोस्त तो हमेशा से कल्पना में खोये रहने वाले हैं। उनको समझना कठिन है। लेकिन यज्ञेश्वर बाबू की पत्नी मुझे अच्छी लगी। बातचीत में ज़रा भी बड़े लोगों का-सा हाव-भाव नहीं रखती। रत्ना की माँ भी अच्छी हैं।'

उसने पूछा, 'रत्ना कौन ?'

मीनू बोली, 'अच्छा, तुम कह क्या रहे हो ?' मीनू हँसी। बोली, 'इतना रास्ता पार कर निमन्त्रण खाने आये, दो-तीन घंटे अड्डा जमाया। उसके बाद पूछ रहे हो, रत्ना कौन है ?'

इस बार वह भी हँसा। बोला, 'समझ गया। असल में मुझे खयाल न था। कलकत्ता की शादियों में यही अजीब बात रहती है। लोग आते हैं, उपहार देते हैं, निमन्त्रण खाकर उठ जाते हैं; लेकिन किसकी शादी है

क्या हाल है—यह सब-कुछ न जानने से भी कोई नुक़सान नहीं होता। बहुत लोग तो आकर सीधे धड़धड़ाते हुए खाने की जगह जाकर बैठ जाते हैं। उसके बाद किसी के हाथों उपहार भेज देते हैं। वहू तक को भी नहीं देखते !'

मीनू बोली, 'कैसा जमाना आ गया है। पता है, मैं तो परेशान हो गयी थी। आये थे शादी के घर, सब लोगों ने मिलकर क्या चाँव-चाँव शुरू किया, पता है ? सिर्फ़ हत्याओं के क़िस्से। किसके मुहल्ले में कितने खून हुए ! किसके घर में रात को कितने लोग छुरा-बम-पाइपगन लेकर सोने आये ! किसके पास से वे कितना चन्दा जबर्दस्ती ले गये ! बस, यही सब बातें। दो-चार तो शाम के पहले ही चली गयीं। उन्होंने खाया भी नहीं।'

वह बोला, 'उधर से हम ही आये हैं। और कोई नहीं।'

मीनू बोली, 'अच्छी बात है, कितने बजे हैं ?'

उसने घड़ी देखी, उसके बाद घड़ी को कान से लगाकर देखा, फिर हँसा। बोला, 'मीनू, घड़ी बन्द है।' उसके बाद उसने घड़ी में चाभी दी।

मीनू बोली, 'चलो, घर चलें।'

वह बोला, 'अच्छा, चलो।'

वे दोनों चलने के लिए ज्यों ही घूमे थे तभी देखा कि चार लड़के उनसे थोड़ी दूर पर खड़े चुपचाप सिगरेट पी रहे हैं और बीच-बीच में उनकी ओर देख रहे हैं। डर के मारे मीनू की अन्तरात्मा तक काँप उठी। उसका गला सूखकर काठ हो गया। उसका भी। वे एक क़दम भी हिल न सके।

मीनू मन-ही-मन बोली : ये लोग वही हैं।

वह मन-ही-मन बोला : वही होंगे।

मीनू मन-ही-मन बोली : वे हमें मार डालेंगे।

वह मन-ही-मन बोला : हाँ।

मीनू ने मन-ही-मन कहा : हमें यहीं मार देंगे ? इसी पुल पर ?

उसने मन-ही-मन कहा : यहाँ भी मार सकते हैं, इसी पुल पर। या

यहाँ से पुल के नीचे ले जाकर मार सकते हैं। या यह भी हो सकता है कि हमें पकड़कर कहीं ले जायें, जहाँ उन लोगों ने आदमियों को मार डालने का इन्तजाम कर रखा हो। उसके बाद अपनी सुविधा के अनुसार एक को, या दोनों को एक साथ मार डालें। उनकी जैसी तबीयत हो।

मीनू मन-ही-मन बोली : उसके बाद हमें कहीं फेंक आयेंगे।

वह मन-ही-मन बोला : हाँ, ये लोग इसी तरह करते हैं।

मीनू मन-ही-मन बोली : लेकिन हमारे बायीं ओर तो कोई नहीं है।

वह मन-ही-मन बोला : शायद वह उनकी चाल हो।

मीनू ने उत्तर दिया : वह हो सकता है। वे सोचते हैं, हम बायीं ओर से भाग सकते हैं। और तभी उनमें से कुछ लोग उधर से निकल आयेंगे।

वह बोला : उसके बाद मारेंगे।

मीनू : पहले डंडे से सिर के पीछे चोट करेंगे?

वह : हाँ, लेकिन तुम्हें कैसे मालूम है?

मीनू : उसके बाद छुरी निकालकर गला छक् से काट देंगे?

वह : हाँ, यही उनका ढंग है। लेकिन मीनू, तुम कैसे,..?

मीनू : उसके बाद भी अगर वह देखेंगे, कि हम छटपटा रहे हैं, या कराह रहे हैं, या 'बचाओ' 'बचाओ' कह रहे हैं तो और कई बार छुरी चलायेंगे?

वह : गोली भी चला सकते हैं!

मीनू : हाँ, वह हो सकता है। वही करते हैं। अच्छा, तो फिर वे लोग पहले ही गोली क्यों नहीं चलाते?

वह : यह जरूर सोचने की बात है। जवाब हमें मालूम नहीं। फिर सब सवालों का ठीक-ठीक जवाब भी नहीं मिलता। यही समझो कि हिन्दू लोग बलि के काठ में बकरे का गला डालकर एक झटके में बलि दे देते हैं। मुसलमान लोग गले की नमी पर कई बार छुरी रगड़कर हलाल करते हैं। वे वैसा क्यों करते हैं और ये क्यों ऐसा करते हैं, इसका जवाब जरूर कुछ होगा। लेकिन उससे बकरे का क्या आता-जाता है? लगता है कि इन लोगों के इसी तरह के कुछ कायदे होंगे जिससे उनमें से एक आदमी पहले डंडा मारकर शिकार को जमीन पर गिरा देता है। उसके बाद दूसरा आदमी

र छुरी चलायेगा, उसके बाद एक और आदमी छाती में गोली
ा। श्रम-विभाजन की बात है।

मीनू : हाँ, लगता है ऐसे ही होगा। लेकिन देखा, वे लोग कितने शान्त
ायी पड़ते हैं, और कितना धीरज रखकर हमारा इन्तजार कर रहे हैं!

वह : हाँ। पहले तो उन्हें कोई जल्दी नहीं है, क्योंकि उन्हें मालूम है
हमसे उन्हें किसी रुकावट का सामना नहीं करना पड़ेगा। वे सामान्यतः
से ही लोगों को मारते हैं जो न बाधा देना जानते हों, या भाग भी न सकते
हों। दूसरे, जिस कारण से हमारे ऊपर उनको गुस्सा नहीं है, इसी से उनके
मन में किसी भी तरह की उत्तेजना या चंचलता पैदा नहीं होती।

मीनू : सिर्फ़ हम ही काँप रहे हैं।

वह : पसीना भी छूट रहा है।

मीनू : यह देखो...।

'वह देखो, अरे वह देखो,' मीनू ने फुसफुसाकर उससे कहा, 'वे हमारी
ओर बढ़े आ रहे हैं।'

उसने मीनू का हाथ पकड़कर उसे पास खींच लिया। फुसफुसाकर
मीनू से कहा, 'मीनू, तुम्हारे हाथ पसीने से तर हो गये हैं।'

मीनू बोली, 'तुम्हारा हाथ कितना ठंडा है!'

शची की शेष बात : एक अपनी तसवीर

शची बोला : आप गवाह हैं। आप जो ईश्वर हैं, जो पाठक हैं, जिनके निक
कुछ भी छिपा नहीं रहता, छिपाया नहीं जा सकता, वही आप जो इ
बीच मेरी बातें कुछ-कुछ जान गये हैं! और-तो-और, मेरे कहे बिना
मेरी इच्छा अपने सम्बन्ध में कुछ कहने की नहीं थी। कहना चाहता
नहीं, लेकिन मनुष्य-समाज ही ऐसा है, जहाँ कुछ छिपाकर रखा नहीं
सकता। दूसरों के सम्बन्ध में हमारे स्वाभाविक कुतूहल और दूसर
चर्चा में हिस्सा बँटाने की सहज प्रवृत्ति से ही हम दूसरों के गोपन क्ष
अनधिकार प्रवेश करते हैं। बिना कहे हस्तक्षेप भी करते हैं। इसी त
हम हर रोज़, हर क्षण अपने मन के रंगों की कूँची से दूसरों का पट

करते जाते हैं। मैं यह भी जानता हूँ, आशा है कि स्वीकार करेंगे कि मेरी अपनी तसवीर भी—एक भी हो सकती है, और बहुत-सी भी हो सकती हैं—इस तरह आपकी आँखों के आगे खोल-खालकर रख दी गयी है। किसकी बनायी हुई है, इसका ठीक पता नहीं। लेकिन यहाँ पाँच चित्रकार हैं जिनमें से प्रत्येक ही मेरा चित्र बनाकर दिखा सकता है। जैसे, (एक) : मिस्टर मोहता। उनके साथ मेरा सम्बन्ध बहुत अँधेरे-उजाले का है। वह मेरे प्रतिपालक हैं। योग्यता के क्षेत्र में हम एक-दूसरे के गुणग्राही हैं। व्यक्तिगत रुचि-अरुचि के मामलों में हम दोनों के बीच दो ध्रुवों का अन्तर है। प्रतिष्ठान की जिम्मेदारियों के पालन में हम दोनों एक-दूसरे के विश्वास-पात्र हैं। (दो): यज्ञेश्वर। मेरा अधीनस्थ कर्मचारी, जिसके अस्तित्व के सम्बन्ध में मैं कभी भी बहुत सचेत नहीं था। अब हो गया हूँ। सच कहने में अब क्या, जब से यह पता चल गया है कि मैं मोहता इंडस्ट्रीज का जनरल-मैनेजर होने वाला हूँ, अब मेरे लिए यज्ञेश्वर के अस्तित्व के सम्बन्ध में और अधिक आँखें बन्द किये रहना मेरे अपने अस्तित्व के लिए ही कभी घातक हो सकता है। अब से वह हमेशा मेरे दाँतों में कंकड़ या आँखों में धूल के कण के समान हो गया है—बराबर बेचैनी का कारण। सच कहने में क्या, मैं उसे जितना सम्मान देकर चलना चाहता हूँ, मन-ही-मन अपने को उसके लिए तैयार करता हूँ। मिस्टर मोहता को भी उतना सम्मान देने की बात नहीं सोचता। (तीन) : मेरा पहले का एक मित्र, जिसे अब मैं उतना पसन्द नहीं करता। मेरी धारणा है कि वह पाखंडी है। लोग उसे सहृदय समझते हैं। मेरा खयाल है कि वह आपत्ति-विपत्ति के सम्बन्ध में बेवकूफ है—यद्यपि लोग उसे साहसी कहते हैं। मेरी धारणा है कि वह असंस्कृत है, उजड्ड है, जबकि लोग उसे स्पष्टभाषी समझते हैं। छोड़िए, लोग उसके बारे में जो चाहें सोचें, मेरा उससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। (चार) : उसकी पत्नी मीनू। वही कभी-कभी मुझे अच्छी लगती है। लेकिन उस पर मैं ज़रा भी असर डाल सका हूँ या नहीं, इसमें मुझे सन्देह है। शायद नहीं। ओह, एक बात बताऊँ, मैं लड़कियों को कभी बहुत प्रभावित कर सकता था! और (पाँच) : केया—मेरी पत्नी।

गले पर छुरी चलायेगा, उसके बाद एक और आदमी छाती में गोली मारेगा। श्रम-विभाजन की बात है।

मीनू : हाँ, लगता है ऐसे ही होगा। लेकिन देखा, वे लोग कितने शान्त दिखायी पड़ते हैं, और कितना धीरज रखकर हमारा इन्तज़ार कर रहे हैं !

वह : हाँ। पहले तो उन्हें कोई जल्दी नहीं है, क्योंकि उन्हें मालूम है कि हमसे उन्हें किसी रुकावट का सामना नहीं करना पड़ेगा। वे सामान्यतः ऐसे ही लोगों को मारते हैं जो न बाधा देना जानते हों, या भाग भी न सकते हों। दूसरे, जिस कारण से हमारे ऊपर उनको गुस्सा नहीं है, इसी से उनके मन में किसी भी तरह की उत्तेजना या चंचलता पैदा नहीं होती।

मीनू : सिर्फ़ हम ही काँप रहे हैं।

वह : पसीना भी छूट रहा है।

मीनू : यह देखो...।

'वह देखो, अरे वह देखो,' मीनू ने फुसफुसाकर उससे कहा, 'वे हमारी ओर बढ़े आ रहे हैं।'

उसने मीनू का हाथ पकड़कर उसे पास खींच लिया। फुसफुसाकर मीनू से कहा, 'मीनू, तुम्हारे हाथ पसीने से तर हो गये हैं।'

मीनू बोली, 'तुम्हारा हाथ कितना ठंडा है !'

शची की शेष बात : एक अपनी तसवीर

शची बोला : आप गवाह हैं। आप जो ईश्वर हैं, जो पाठक हैं, जिनके निकट कुछ भी छिपा नहीं रहता, छिपाया नहीं जा सकता, वही आप जो इस बीच मेरी बातें कुछ-कुछ जान गये हैं ! और-तो-और, मेरे कहे बिना भी मेरी इच्छा अपने सम्बन्ध में कुछ कहने की नहीं थी। कहना चाहता भी नहीं, लेकिन मनुष्य-समाज ही ऐसा है, जहाँ कुछ छिपाकर रखा नहीं जा सकता। दूसरों के सम्बन्ध में हमारे स्वाभाविक कुतूहल और दूसरों की चर्चा में हिस्सा बँटाने की सहज प्रवृत्ति से ही हम दूसरों के गोपन क्षेत्र में अनधिकार प्रवेश करते हैं। बिना कहे हस्तक्षेप भी करते हैं। इसी तरह से हम हर रोज़, हर क्षण अपने मन के रंगों की कूंची से दूसरों का पट चित्रित

आप कलेजे पर हाथ रख सोचकर तो देखिये कि क्या सचमुच हम कभी निश्चयात्मक रूप से सुलझे हुए होते हैं ? यह सुलझना क्या बिलकुल अवास्तविक नहीं है ? कम-से-कम मैं तो जानता हूँ, अपने-आपके निकट कि मैं बहुत साफ-स्पष्ट नहीं हूँ। इसीलिए जीवन के किसी प्रश्न का उत्तर जल्दी से नहीं पा सकता। समस्या का सामना होने पर समाधान नहीं ढूँढ पाता हूँ। मैं किसलिए हूँ ? कोई नियन्ता है ? वे कौन हैं—वही अत्यन्त वृद्ध ईश्वर—जिनकी आँखों में कीचड़ भरा पड़ा है ? या यह अटल विश्वास : इतिहास की नियति के अमोघ विधान में वंचित मानव की जय अवश्य होगी ? अथवा सृष्टि की दुर्निवार गति इधर-उधर के स्रोत में, पुरुषार्थ की पतवार पर बैठकर बारंबार लक्ष्य को ठीक करती है ? सुख क्या दुख की ही असीमता का दूसरा नाम है ? सुख का उत्स कहाँ है ? धन में, मन में, मर्यादा में, भोग में, रमणी के कुम्भ-कुच में, नाभि-मूल में, या वानप्रस्थ अथवा संन्यास में ? हत्या-युद्ध-ध्वंस में क्या निर्माण की अन्तर्निहित प्रतिश्रुति नहीं है ? शान्ति की स्थिति बन्धन का किंचिन्मात्र संकेत नहीं देती ? बतलाइये, क्या इसका उत्तर किसी के पास स्पष्ट है ? या प्रश्न ही पहेली है—निरर्थक, वाग्जाल—केवल समय बिताने के लिए दिमाग की बेकार खुजली !

उस दिन चार-पांच लड़कों ने मिलकर एक निरस्त्र किशोर की हत्या कर दी। खुले रास्ते पर। तिमंजिले के बरामदे में खड़े सहसा मेरी नजर उधर पड़ गयी। न, न, मैं उतरा नहीं। कहीं हत्यारे मुझे देख लें तो ! अपनी कारगुजारी के साक्षी के रूप में कहीं मुझे पहचान न लें ! इसी डर से मैं झटपट कमरे में घुस गया। इसी बीच उन लोगों ने मुझे पहचान लिया या नहीं, जान नहीं सका। कई दिन बहुत डरा-डरा रहा। हर रोज किसी निश्चित वक्त पर घर न लौटता। गोकि मेरी अपनी गाड़ी है, लेकिन बहुत दिन उस पर नहीं चढ़ा। हर दिन ऑफिस से अलग-अलग तरह की गाड़ी पर चढ़ कर घर लौटता। किसी-किसी दिन टैक्सी से। मेरा खयाल यह था कि तिमंजिले से मेरे उतरते-उतरते ही वे लड़के को मार चुके होते। मैं उसे बचा न पाता। लेकिन मेरा हिसाब ठीक नहीं बैठता। वह मर गया है—यह सोचकर वे उसे वहीं फेंककर चले गये। प्रायः तीन घंटे लड़का

सड़क पर पड़ा रहा। उसके वाद एक बूढ़े रिक्शेवाले की दया से वह अस्पताल में भरती हुआ। दो दिन वाद मर गया। तीन घंटे में इतना खून वह गया था कि उसे वचाया न जा सका। डॉक्टरों पर आस्था रखकर वक़्त पर अस्पताल ले जाने पर उसे शायद वचाया जा सकता था।

लेकिन डॉक्टरों पर मुझे ज्यादा आस्था नही है। तीन घंटे पहले अस्पताल पहुँच जाने पर वह शायद वच जाता! आप लोग जो इस तरह की वातें हमेशा ही अखवार में पढ़ा करते हैं, या कभी संयोग से देखने का सौभाग्य भी पा जायें—आप क्या सोचते हैं कि वह वच जाता? देखिये तो, मेरी ज़िम्मेदारी कहाँ है? हाँ, मेरी गाड़ी है, वह उस समय गैरेज में ही थी। गाड़ी निकालकर रास्ते पर निकाल लेता और उसके पास पहुँचने मे मुझे वहुत होता तो दस मिनट का वक़्त लगता। उसके वाद अस्पताल। अधिक-से-अधिक पाँच मिनट। लेकिन मैंने वह नहीं किया। मुझे कैसे पता चलेगा कि कितने लड़कों ने उसे मारा? कि वे अनाड़ी थे? हो सकता है कि थोड़ी देर वरामदे में और खड़े रह सकने पर वह मुझे देख लेते। और मैं उन्हें अनाड़ी समझकर शोर मचाकर लोगों को जमा कर लेता। सच-सच वताइये, आपमें से कोई भी मेरी पुकार का जवाव देता? या वुद्धू की तरह चिल्लाना और शोर ही मेरे पल्ले पड़ता—कोई निकलता नही—इस वीच मैं उनकी नजरों में आ जाना, उनके द्वारा की गयी हत्या के सिलसिले में!

आत्मरक्षा के लिए सतर्क होना क्या अनुचित है? आप क्या सोचते हैं, वताइये? मुझे तो लगता है कि उस दिन इस हालत में घर के अन्दर घुस जाने में मैंने कोई गलत काम नहीं किया; क्योंकि उन हत्याकारियों की कुशलता के सम्बन्ध में उस समय सन्देह करने का कोई कारण न था। मैं इस सरल विश्वास के कारण ही घर में घुस गया था कि हत्यारे अपना काम ठीक तरह पूरा करेंगे! लेकिन महाशय, दुनिया क्या हो गयी है—देखिये, खूनी भी आजकल ठीक ढंग से खून नहीं कर पाते! एक वड़े भारी उद्योग के भावी जनरल-मैनेजर के रूप में मुझे यह समझना उचित था कि कुशलता का मानदंड सर्वत्र गिर गया है। किन्तु हत्यारों के क्षेत्र में भी वह प्रयुक्त हो सकता है, यह मैं कैसे जानता?

मैंने दफ्तर में कई लोगों को इस घटना की बात बतायी।। उनमें से हर एक से मुझे समर्थन मिला। पर्सनेल-मैनेजर बोले, आप कितने भाग्यवान हैं कि उनमें से किसी ने आपको देखा नहीं, नहीं तो दो-एक दिन में अगर बदकिस्मती से कोई पहचान ले तो सन्देह कर ऐसा कह भी सकते हैं कि इस तरह की ही तरह के किसी आदमी को उस दिन बरामदे में खड़े देखा था! इसका मुझे खयाल ही नहीं आया था। ठीक तो है, इस तरह की आशंका बिलकुल बेबुनियाद भी नहीं हो सकती। हम लोगों ने, जिन्होंने लिखना-पढ़ना थोड़ा सीख लिया है वे ही जानते हैं कि अपराध-विषयक विलायती उपन्यासों में इस तरह की नजीरें बहुत अधिक हैं। पहले खून को दबा देने के लिए खूनियों ने अनेक गवाहों या गवाह के सन्देह में बहुतों का खून किया है। अगाथा क्रिस्टी के उपन्यासों में इस तरह के तमाम अकाट्य उदाहरण भरे पड़े हैं। इसी कारण से मैंने पर्सनेल-मैनेजर के सन्देह को उड़ा देने का साहस नहीं किया, क्योंकि वे भी पढ़ाई-लिखाई बहुत करते हैं। उन्होंने अगाथा क्रिस्टी को घोलकर पीआ हुआ है!

उन्होंने ही सुझाव रखा, आपकी गाड़ी को ही शायद वे पहचानते हों, आप गाड़ी बदल लें। घर से निकलते और जाते वक्त बदल लिया करें। क्लब में एक गाड़ी से आयें, दूसरी गाड़ी से वापस जायें।

और उन्होंने ही सारा बन्दोबस्त भी कर दिया। कई स्टॉफ-कारों में कई दिन घर लौटा। अनेक दिन टैक्सी से। कई दिन आतंकित रहा। फिर अपनी गाड़ी लेकर ही निकलने का मनोबल लौट आया। ऐसे ही वक़्त हमारे क्लब में डॉक्टर बोले, जानते हैं मिस्टर बागची, आपके घर के पास उस दिन जिस लड़के का खून हुआ था, आपने बताया था न, वह वहाँ नहीं मरा, हज़रत। उसे रास्ते से एक रिक्शावाले ने उठाकर अस्पताल में भरती करा दिया। मेरे ही एक दोस्त ने उसका ऑपरेशन किया। तीन दिन जिन्दा रहा, पता है? स्टेटमेंट भी दिया था। लेकिन इतनी देर करके उसे अस्पताल ले जाया गया कि खून काफी बह गया था, और वह बच नहीं सका।

स्टेटमेंट दिया था! छाती में धक् से चोट लगी। वह जब छुरा खाकर गिर रहा था, तब क्या वह मुझे देख पाया था? मेरी शकल बताकर यह तो नहीं कहा कि एक आदमी ने तिमंजिले के बरामदे से खड़े-खड़े सब देखा

मैंने दफ्तर में कई लोगों को इस घटना की बात बतायी। । उनमें से हर एक से मुझे समर्थन मिला। पर्सनेल-मैनेजर बोले, आप कितने भाग्यवान हैं कि उनमें से किसी ने आपको देखा नहीं, नहीं तो दो-एक दिन में अगर बदकिस्मती से कोई पहचान ले तो सन्देह कर ऐसा कह भी सकते हैं कि इस तरह की ही तरह के किसी आदमी को उस दिन बरामदे में खड़े देखा था ! इसका मुझे खयाल ही नहीं आया था। ठीक तो है, इस तरह की आशंका बिलकुल बेबुनियाद भी नहीं हो सकती। हम लोगों ने, जिन्होंने लिखना-पढ़ना थोड़ा सीख लिया है वे ही जानते हैं कि अपराध-विषयक विलायती उपन्यासों में इस तरह की नजीरें बहुत अधिक हैं। पहले खून को दबा देने के लिए खूनियों ने अनेक गवाहों या गवाह के सन्देह में बहुतों का खून किया है। अगाथा क्रिस्टी के उपन्यासों में इस तरह के तमाम अकाट्य उदाहरण भरे पड़े हैं। इसी कारण से मैंने पर्सनेल-मैनेजर के सन्देह को उड़ा देने का साहस नहीं किया, क्योंकि वे भी पढ़ाई-लिखाई बहुत करते हैं। उन्होंने अगाथा क्रिस्टी को घोलकर पीआ हुआ है !

उन्होंने ही सुझाव रखा, आपकी गाड़ी को ही शायद वे पहचानते हों, आप गाड़ी बदल लें। घर से निकलते और आते वक्त बदल लिया करें। क्लब में एक गाड़ी से आयें, दूसरी गाड़ी से वापस जायें।

और उन्होंने ही सारा बन्दोबस्त भी कर दिया। कई स्टॉफ-कारों में कई दिन घर लौटा। अनेक दिन टैक्सी में। कई दिन आतंकित रहा। फिर अपनी गाड़ी लेकर ही निकलने का मनोबल लौट आया। ऐसे ही वक्त हमारे क्लब में डॉक्टर बोले, जानते हैं मिस्टर बागची, आपके घर के पास उस दिन जिस लड़के का खून हुआ था, आपने बताया था न, वह वहाँ नहीं मरा, हजरत। उसे रास्ते से एक रिक्शावाले ने उठाकर अस्पताल में भरती करा दिया। मेरे ही एक दोस्त ने उसका ऑपरेशन किया। तीन दिन जिन्दा रहा, पता है ? स्टेटमेंट भी दिया था। लेकिन इतनी देर करके उसे अस्पताल ले जाया गया कि खून काफ़ी बह गया था, और वह बच नहीं सका।

स्टेटमेंट दिया था ! छाती में धक् से चोट लगी। वह जब छुरा खाकर गिर रहा था, तब क्या वह मुझे देख पाया था ? मेरी शकल बताकर यह तो नहीं कहा कि एक आदमी ने तिमंजिले के बरामदे से खड़े-खड़े सब देखा

घटनास्थल पर ही न मार सके, यह सुनकर मैंने उन्हें जो गाली दी, ९ भी तो अन्तर से निकली थी। इसीलिए मेरा 'मैं' इतना धुंधला था ! ऐसा संशयपूर्ण ही मेरा चित्र और चरित्र है।

आत्मरक्षा के लिए नृशंसता-मूलक व्यवस्था करना और कायरता में विभाजन सीमारेखा कहाँ है, यह मुझे अभी ठीक से समझना जरूरी है। मैं तो इस बारे में बिलकुल ही अस्पष्ट हूँ। आप लोगों में वह सम्भावित आविष्कारक कौन है, आगे आइये, उन्हें मैं नमस्कार करता हूँ, क्योंकि वे ही इस युग के त्राता होंगे ! उनके निकट मैं नतजानु हूँगा, प्रार्थना करूँगा, दिखा दें, पहचनवा दें उस विभाजक सीमारेखा को, जिसके इस पार आत्मरक्षा हो और उस पार कापुरुषता। एक बार पहचान लेने पर फिर मैं इस सीमा को नहीं लाघूँगा। उस पार नहीं जाऊँगा। तभी आप देखेंगे कि हम ग्लानि की इस महामारी को निर्मूल कर सकेंगे, उसके प्रतिकार का साधन भी। हमारा विवेक रोगमुक्त होगा और हम नरक की यन्त्रणा से उद्धार पा जायेंगे !

ये बातें क्यों कह रहा हूँ, वह भी सुनिये। अपने डॉक्टर के पीछे लगकर और पुलिस को कुछ खिला-पिलाकर लड़के के मृत्युकालीन वक्तव्य की नकल मैंने पा ली। मैं बेकार ही इतना डर गया था। मेरे सम्बन्ध में कोई भी उल्लेख उसमें नहीं था। वह अपने आततायियों को भी नहीं पहचान पाया था, क्योंकि लड़का इस मुहल्ले का नहीं था। बहनोई को फालिज हो गया था, यह समाचार पाकर आया था कि कुछ दिनों यहाँ रहेगा। दीदी के घर में दूसरा कोई नहीं है, इसलिए। दवा खरीदने निकला था। उसके बाद आक्रमणकारी उस पर टूट पड़े। बिलकुल मामूली-सा किस्सा ! ऐसी वारदातों की खबरें अखबारों में रोज निकला करती हैं। जिस क्षण से यह जान लिया कि लड़के ने किसी तरह से मुझे नहीं लपेटा है, तभी से देखिये, कैसा आश्चर्य है कि मैं अपने को किस तरह अपराधी मान रहा हूँ !

खूनियों का शिकार, हत्यारे, और हत्या के साक्षी—यह तीन बिन्दु

'यह मैं हूँ'—शची ने यह बात कहकर सबकी ओर देखा, उसके बाद बगल में बैठी केया की ओर देखा। उसके बाद गाड़ी को स्टार्ट करते-करते अपने-आप से कहा, मैं अब जरा क्लब जाऊँगा।

केया से बोला, 'केया, चलो जरा क्लब घूम आयें।'

केया बोली, 'बहुत देर नहीं हो गयी है?'

शची बोला, 'देर कहाँ, अभी दस ही तो हुए हैं।'

उसके बाद गाड़ी मोड़ते-मोड़ते देखा कि भूतपूर्व मन्त्रियों, प्रशासकों और अफसरों ने अपनी-अपनी गाडी में बैठकर थकान के भार से एक ही तरह से निढाल देह को गद्दियों पर फैला दिया है; यज्ञेश्वर और भुवन दरवाजे पर खड़े विशिष्ट अतिथियों को विदा कर रहे हैं।

शची ने एक हाथ से सिगरेट निकालकर ओठों में दबायी, लाइटर से उसे सुलगाया, उसके बाद कई सी० आई० पी० लोगों से आँखें मिलने पर सिर हिलाकर विदा ली।

उसके बाद बोला, 'अभी तो दस हैं, केया। रात तो अभी बहुत कमसिन है, डार्लिंग!'

गरियाहाट के पुल पर वे दोनों

वे बदन से बदन सटाकर खड़े थे। उसकी मुट्ठी में मीनू का हाथ था। पसीज रहा था। आस-पास ऊपर आकाश में बहुत सौंदर्य है—देखने योग्य! किन्तु इनका ध्यान उधर नहीं था।

मीनू ने सोचा, तो अब सब समाप्त है।

मीनू फुसफुसाकर बोली, 'सुनो, वे आ नहीं रहे हैं। रुके हैं। हम लोगों की ओर बराबर देख रहे हैं।'

उसने सोचा, हाँ, हमें देख रहे हैं। शायद मन-ही-मन तौल रहे हों। हम लोगों की लाशें गायब करने में कितनी जगह की जरूरत पड़ेगी, शायद नाप-जोख कर रहे हों।

वह बोला, 'जानती हो, मीनू, सहसा मन में एक बात उठी है।'

मीनू बोली, 'क्या बात ?'

वह बोला, 'तुम्हारे पिता के साथ हमारा एक पक्का समझौता हुआ था।'

मीनू ने सोचा, वे लोग क्या एक साथ भागकर हमला करेंगे ?

वह बोला, 'समझौता किस बारे में था, पता है ?'

मीनू ने पूछा, 'किस बारे में ?'

उसने सोचा, क्या मीनू सोच रही है कि मैं डर गया हूँ ?

मीनू ने सोचा, अच्छा, वे लोग देर क्यों कर रहे हैं ? उन लोगों का क्या इससे और भी कुछ बुरा मतलब है ?

वह बोला, 'तुम्हारे अपने पिता के घर जाने के बारे में, मैंने कहा था कि आपकी लड़की जितनी बार चाहे अपने पिता के घर जाये, मुझे कोई आपत्ति नहीं। पर आपको यह तो पता है सर, कि मैं कामकाजी आदमी ठहरा, मैं बार-बार वहाँ हाज़िर नहीं हो सकूँगा; मेरी तरक़्क़ी रुक जायेगी। तुम्हारे बाबा बोले—हाँ, हाँ, सो तो है ही। तुम्हारी उम्र तरक़्क़ी की है। तुम्हें ऑफ़िस से ग़ैरहाज़िरी तो नहीं चल सकती। मीनू जब आना चाहेगी, मुझसे कह देना, मैं ही उसे साथ ले आऊँगा।'

मीनू बोली, 'लेकिन बाबा ने बराबर अपनी बात रखी।'

वह बोला, 'मैंने भी। क्यों ? बराबर तुम्हें हावड़ा स्टेशन पर घड़ी के नीचे उनके हाथ में सौंपकर आता रहा या नहीं ? क्यों ? तुम तब कितनी जल्दी-जल्दी अपने बाबा के घर जाया करती थीं !'

मीनू बोली, 'बताओ तो, मेरा क्या क़ुसूर है ? उन दिनों तुम्हारे घर में पूरी जगह भी नहीं थी। दिन-रात लोग भरे रहते थे। एक पल के लिए तुम्हें अपने पास न पाती। एक क्षण के लिए अकेली नहीं मिल सकती थी। बिलकुल बान्धव-हीन धाम ! असह्य हो जाने पर ही इसका प्रतिकार चाहती थी। तुम मुझे ग़लत समझते थे। दुनिया-भर की बेकार बातें कहते फिरते थे।'

वह बोला, 'मैं कहता था—मीनू, आओ, हम प्रेम के स्रोत में डुबकी
ें। प्रेम की निधि से ऐश्वर्यवान हो उठें। इन सारी बातों को तुम
बातें बताती हो, मीनू!'

मीनू बोली, 'शायद बातें अच्छी हों। लेकिन बातों से मेरा क्या भला
ता? बतलाओ तो?'

वह बोला, 'मेरा एक अंक था। अंक इस तरह था : तुम + मैं =
म। तुम्हारे और मेरे योग से एक ऐसा अशेष प्रेम मिलेगा कि उससे
हमारे आत्मीय-बन्धुओं, को जितनी भी प्यार की कमी रही हो, सब पूरी
हो जायेगी।'

मीनू बोली, 'तुम सिर्फ कहते थे—मीनू, स्वार्थ-त्याग करो।'

वह उत्साहित होकर बोला, 'कहता था न!'

मीनू बोली, 'मेरा तो कुछ था नहीं जिसका त्याग करती। सबको आराम से रखने के लिए, सबका मन पाने के लिए, सब-कुछ ही तो दे दिया था। मैं काम कर सकती थी, सबेरे से रात बीते तक, और उससे भी ज्यादा। लेकिन घर में और बहुत-से लोग भी तो थे। वे धीरे-धीरे आलसी होने लगे। उसके बाद वे समझने लगे कि कोई काम न करना, और मुझसे ही सब काम करवाना—यह सब उनका अधिकार है। केवल मैं ही क्षीण होने लगी। अच्छा, तुम्हारा अंक मिल गया?'

वह शान्त निश्चल भाव से बोला, 'नहीं मीनू, कहीं कुछ गड़बड़ी हो गयी थी।'

मीनू बोली, 'तुम्हारे-हमारे योगफल में अभी भी प्यार नहीं मिलता?'

वह बोला, 'यह जटिल भग्नांश का अंक है, मीनू। सीढ़ी टूटने का अंक। जल्दी मिलाना मुश्किल है। धीरज के साथ हिसाब करते रहने के अलावा जवाब निकालने का कोई सरल तरीका नहीं है। एक-एक सीढ़ी चढ़ना होगा। मिलाकर देखना पड़ेगा कि अंक ग़लत है, या तरीक़ा ग़लत है!'

वह बोला, 'जानती हो, मीनू, सहसा मन में एक बात उठी है।'

मीनू बोली, 'क्या बात ?'

वह बोला, 'तुम्हारे पिता के साथ हमारा एक पक्का समझौता हुआ था।'

मीनू ने सोचा, वे लोग क्या एक साथ भागकर हमला करेंगे ?

वह बोला, 'समझौता किस बारे में था, पता है ?'

मीनू ने पूछा, 'किस बारे में ?'

उसने सोचा, क्या मीनू सोच रही है कि मैं डर गया हूँ ?

मीनू ने सोचा, अच्छा, वे लोग देर क्यों कर रहे हैं ? उन लोगों का क्या इससे और भी कुछ बुरा मतलब है ?

वह बोला, 'तुम्हारे अपने पिता के घर जाने के बारे में, मैंने कहा था कि आपकी लड़की जितनी बार चाहे अपने पिता के घर जाये, मुझे कोई आपत्ति नहीं। पर आपको यह तो पता है सर, कि मैं कामकाजी आदमी ठहरा, मैं बार-बार वहाँ हाज़िर नहीं हो सकूँगा; मेरी तरक़्क़ी रुक जायेगी। तुम्हारे बाबा बोले—हाँ, हाँ, सो तो है ही। तुम्हारी उम्र तरक़्क़ी की है। तुम्हें ऑफ़िस से ग़ैरहाज़िरी तो नहीं चल सकती। मीनू जब आना चाहेगी, मुझसे कह देना, मैं ही उसे साथ ले आऊँगा।'

मीनू बोली, 'लेकिन बाबा ने बराबर अपनी बात रखी।'

वह बोला, 'मैंने भी। क्यों ? बराबर तुम्हें हावड़ा स्टेशन पर घड़ी के नीचे उनके हाथ में सौंपकर आता रहा या नहीं ? क्यों ? तुम तब कितनी जल्दी-जल्दी अपने बाबा के घर जाया करती थीं !'

मीनू बोली, 'बताओ तो, मेरा क्या क़ुसूर है ? उन दिनों तुम्हारे घर में पूरी जगह भी नहीं थी। दिन-रात लोग भरे रहते थे। एक पल के लिए तुम्हें अपने पास न पाती। एक क्षण के लिए अकेली नहीं मिल सकती थी। बिलकुल बान्धव-हीन धाम ! असह्य हो जाने पर ही इसका प्रतिकार चाहती थी। तुम मुझे ग़लत समझते थे। दुनिया-भर की बेकार बातें कहते फिरते थे।'

वह फुसफुसाकर बोला, 'मीनू, सुनो, इस अन्तिम समय एक बात कह दूँ—एकदम कलेजे के खून से लिखी हुई।'

एक अत्यन्त करुण नाटक का अन्तिम दृश्य

पत्नी ने अस्त-व्यस्त वेश में आकर वध्य-भूमि में प्रवेश किया। पति वध्य-मंच पर बँधा है, जल्लाद बड़ी-सी तलवार कन्धे पर रखे चहल-क़दमी कर रहा है।

पत्नी (अत्यन्त कातर होकर) : नाथ! प्राणेश्वर!! जीवन-वल्लभ!!! तो विदा!

पति (रुँधे गले से) : हृदयेश्वरी! प्राणाधिके!! प्रियतमे!!! तो विदा!

पत्नी : हाय प्राणेश्वर! (मूर्छित हो जाती है)

पति : अयि पतिव्रते! क्षमा करो। अपने इस पाखंडी पति को क्षमा करो। मैं तुम्हें सुखी न रख सका, मृत्यु भी इस अफ़सोस को मेरे मन से न मिटा सकेगी।

पत्नी (तड़ाक से उछलती है) : अरे, ऐसा मत कहो, मत कहो। (रोते-रोते) हुँ-हुँ, मैं, हुँ, बहुत सुखी थी, हुँ-ऊँ।

पति : तुमने बहुत सहनशीलता से सेवा की। और मैंने उपेक्षा और अनादर से तुम्हारे कोमल प्राणों को चोट पहुँचायी!

पत्नी : नहीं, नहीं, मैं ही अपराधी हूँ! घमंड से, अविचार से तुम्हारी जिन्दगी को मुसीबत बना दिया। मैंने, मैंने, मैंने!

पति : तुमने मेरे पैरों पर अंजलि देने के लिए प्रेमस्थली से कितने पुष्प चयन किये, और मैं हाय...! (छाती पीटता है)

पत्नी : ऐसा मत कहो। मैं और न सह सकूँगी। हाय मैं अभागिन, मेरे प्राण कितने कठोर हैं! अभी भी नहीं निकलते। प्राणनाथ! जीवन-सर्वस्व! आकंठ पिपासा लिये तुम कितने दिन मेरे पास मांगे-मांगे आये और मैंने मूढ़ तुच्छ अभिमान से अविनय से तुम्हें लौटा दिया। मेरा अप-राध क्षमा के योग्य नहीं है।

मीनू का छोटा-सा प्रश्न

अपने पति को, विशेष रूप से उनकी बात-चीत को, मैं कभी-कभी समझ नहीं पाती। उसका कारण शायद यह हो कि मैं खास लिखना-पढ़ना कुछ नहीं जानती। भाषा को सजा-सँवारकर बात भी नहीं कर सकती। इस समय ये मेरा हाथ अपने हाथ में पकड़े हुए हैं। मुझे लग रहा है कि किसी कठोर पहाड़ से लगी खड़ी हूँ। उन्होंने जो उत्तर पाना चाहा है, क्या वह अब भी उनके हाथ की मुट्ठी में नहीं है? क्या पता?

और वे भी हिले

सहसा छायाएँ चलायमान हुईं। गरियाहाट पुल के ठीक सिर पर जो आसमान है, उसमें प्रकाश बुझ गया। मीनू ने तिरछी नज़र से देखा—छायाएँ बढ़ी आ रही हैं।

मीनू मन-ही-मन बोली : पुल की रेलिंग पर टिककर खड़े रहो।

उसने मन-ही-मन कहा : क्यों?

मीनू (मन-ही-मन) : वैसा होने से डंडे सिर के पीछे से मारने में उन्हें सुविधा होगी।

वह (मन-ही-मन) : यह तो है।

वह और मीनू रेलिंग पर टिककर खड़े हो गये।

वह (मन-ही-मन) : इस तरह से गला उनके सामने कर देना क्या ठीक हुआ?

मीनू (मन-ही-मन) : ठीक समझ में नहीं आता, तो क्या वे लोग तुम्हारे, माने, हमारे लिए क़ानून-क़ायदे का उल्लंघन करते?

वह (मन-ही-मन) : क़ानून-क़ायदे? यज्ञेश्वर ने तो कुछ भी नहीं तोड़ा। लेकिन क्या उससे उसकी क्रांतिकारी भावना में कमी आयी?

मीनू (मन-ही-मन) : क्या पता!

वह फुसफुसाकर बोला, 'मीनू, सुनो, इस अन्तिम नाटक का एक भाग मैं दूँ—एकदम कलेजे के खून से लिखी हुई।'

एक अत्यन्त करुण नाटक का अन्तिम दृश्य

पत्नी ने अस्त-व्यस्त वेश में आकर मध्य-भूमि में प्रवेश किया। पति मध्य-मंच पर बँधा है, जल्लाद बड़ी-सी तलवार कंधे पर रखे चहलकदमी कर रहा है।

पत्नी (अत्यन्त कातर होकर) : नाथ! प्राणेश्वर!! जीवन-वल्लभ!!! लो विदा!

पति (रुँधे गले से) हृदयेश्वरी! प्राणाधिके!! प्रियतमे!!! लो विदा!

पत्नी : हाय प्राणेश्वर! *(मूर्छित हो जाती है)*

पति : अयि पतिव्रते! क्षमा करो। अपने इस अभागे पति को क्षमा करो। मैं तुम्हें सुखी न रख सका, मृत्यु भी इस अपराध को [illegible] न मिटा सकेगी।

त : प्रिये, कहो, तुमने क्षमा कर दिया।
त्नी : प्रियतम, अपराधी तो मैं हूँ। कहो, तुमने क्षमा किया।
ति : प्राणेश्वरी, कहो, तुम मुझे प्यार करती हो।
पत्नी : प्राणेश्वर!
पति : कहो, कहो, तुम सुख में थीं।
पत्नी (अत्यन्त आवेग के साथ) : हृदय के राजा!
पति : कहो, कहो, प्राणाधिके, मैंने तुम्हें कष्ट नहीं दिया। उपेक्षा
हीं की।
पत्नी : तुम्हारे न रहने से मेरा संसार सूना हो जायेगा, प्रियतम!
पति : ओह, हो, कैसा विचित्र सुख है! फिर ज़िन्दा रहने की मेरी
इच्छा हो रही है।

पत्नी (आश्चर्य का बहुत बड़ा आघात सँभालकर) : एँ! क्यों?
पति (उत्साह में भरकर) : तुम और मैं—हम दोनों प्रेम की अनन्त
सुख-शैया पर शयन करेंगे।
पत्नी : किन्तु अगर तुम फिर मेरी उपेक्षा करो, मैं तुमको अविनय के
साथ लौटा दूँ, छोटी-छोटी बातों पर फिर अगर झगड़ा-झंझट हो? पहले
समझ लो।
पति : वह तो है। तो विदा, प्रियतमे! जल्लाद, आओ।
पत्नी (शोक में अधीर होकर) : विदा, प्राणवल्लभ! ऊँ-ऊँ-ऊँ।

मीनू को कई ज़रूरी उपदेश

वह बोला, 'मीनू, डरना मत। वे तुमसे कुछ न कहेंगे।'
मीनू बहुत डर गयी थी। बोली, 'किस तरह मालूम हुआ?'
वह बोला, 'क्यों, अखबार पढ़कर। वे लोग औरतों को बहुत मा
पीटते नहीं हैं। जो कह रहा हूँ, सुनो। तुम्हारे पास जो रुपये हैं, उनसे
दिन चल जायेगा न?'
मीनू बोली, 'रुपया कहाँ है? इस महीने दवा-दारू में जो

खर्च हुआ ? तुम तो कोई हिसाब रखते नहीं। उसके बाद खुद ही तो ढेरों रुपये ले लिये।'

वह बोला, 'मैं हिसाब नहीं चाहता। तुम्हारे पास जो कुछ रुपया है, उससे दस दिन के क़रीब चल जायेगा ? राशन है, बाजार-आजार है ?'

मीनू हिसाब लगाकर बोली, 'दस दिन ? हाँ, इतना चल सकता है, क्योंकि मछली तो कई दिन खरीदनी नहीं है।'

वह बोला, 'हाँ, मछली के दाम तो बहुत चढ़ गये हैं !'

मीनू बोली, 'तो जो कुछ है उसमें दो राशन; कल ही तो एक राशन लेना होगा—और दस दिनों का सौदा हो जायेगा।'

वह थोड़ा निश्चिन्त हुआ। बोला, 'बस। तो फिर कोई खास फ़िक्र नहीं। अब जो बता रहा हूँ वह याद रखो। कल ही शायद यह खबर अखबार में निकल जायेगी। इसलिए खबर देने के लिए तुम्हें पोस्टकार्ड खरीदने में पैसा बरबाद नहीं करना पड़ेगा। हमारे दफ़्तर में कर्मचारी लोगों का एक फ़ंड है—घाट फ़ंड। तुम्हें क़रीब चार दिनों में ही रुपये मिल जायेंगे। हज़ार के क़रीब मिलेंगे। पाँच सौ के क़रीब का [illegible] सब काम हो जायेगा, समझीं ?'

मीनू बोली, 'घाट का खर्च इतना लगता है ?'

वह बोला, 'धत् बुद्धू, घाट-खर्च की बात कौन कह रहा है ? वह यशेश्वर, सभी—वही सबका कर देंगे। पुलिस के यहाँ से वही मेरे मृत शरीर को निकलवा लेंगे। ऑफ़िस से गाड़ी, धूप, फूलों की माला, अगर, सफ़ेद कपड़ा—वे ही सब लेकर घर में आयेंगे, देखना। अपने ऑफ़िस में मैं ही तो पहले-पहल उनके हाथों चढ़ रहा हूँ। पहला होने का पूरा लाभ मैं पा जाऊँगा ! इसके लिए तुम्हें चिन्ता नहीं करनी होगी। मेरा जो पद है, उसमें मरने पर ज़रूर आधे दिन से ज़्यादा की छुट्टी होने की बात नहीं है। किसी विभाग के मुखिया से शुरू करके जनरल-मैनेजर तक एक दिन की पूरी छुट्टी का नियम है। फिर मैं मज़दूर-यूनियन का एक पदाधिकारी हूँ, यशेश्वर मेरा मामला हाथ में लेगा, ऐसा लगता है। यह भी हो सकता है कि पूरी छुट्टी मंज़ूर करा ले। वैसा होने पर सबको ही कुछ अतिरिक्त रुपया मिल

किन यह लाभ मुझे मिलेगा या नहीं, यह पक्का नहीं है। तुम
स्त देकर देख सकती हो। अच्छा, वीमे की पालिसियाँ तो ठीक से

बोली, 'लेकिन एक तो मेरे पास नहीं है।'
बोला, 'वह वन्धक रखी है। दूसरी पालिसियों के वंडलों के साथ
की रसीद है। परसों ही खेतू को बुलाकर उसका इन्तज़ाम झटपट
लना। एक वात याद रखना, इस तरह की घटनाओं से या अकाल-
का एक फ़ायदा होता है। लोगों की सहानुभूति वहुत जल्दी मिलती
इनके हाथों मरने पर, मैं देखता हूँ, आजकल परस्पर भाई-चारे के
वहुत जल्द जाग उठते हैं। तुम्हारा कर्तव्य है—भाई-चारे के इन भाव
ताज़ा रहते-रहते अपना सारा काम पूरा कर लेना! लेकिन ये वह
नों तक ताज़ा नहीं रहते। तुम्हें वहुत समय मिलेगा—तव तक जब तक
क हमारे ऑफ़िस का दूसरा आदमी न मरे!'

मीनू वोली, 'तुमने तो मर जाने के वाद से क्या करना होगा, वह सव
वता दिया। लेकिन पुलिस के मुर्दाघर में जाओगे कैसे, यह तो वतलाया
नहीं।'

वह बोला, 'इतना व्यौरा जाने विना भी तुम्हारा काम चल जायेगा।
वहाँ मुझे पुलिस की गाड़ी या ऐंवुलेंस में पहुँचा जायेगा। हमारा कोई खर्च
नहीं होगा। उससे तो बीमारी भोगकर स्वाभाविक मृत्यु होने से ही तुम्हारे
सिर पर फ़ालतू खर्च का वोझ पड़ता! अव सुनो मीनू, मन में ये वातें
फिर से दुहरा लो : (एक) घाट फ़ंड का रुपया वसूल करना, (दो)
कम्पनी से पिछले महीने का वेतन वसूल करना, (तीन) कोऑपरेटिव से
मेरे शेयर का रुपया, सूद और क़र्ज़ लेना, (चार) प्रॉविडेंट फ़ंड और
ग्रैच्युइटी का रुपया वसूल करना, और (पांच) वीमे का रुपया वसूल
करना। यह पांच-सूत्री कार्य तुम्हें करना होंगे। जीवन वीमा खतरे औ
दुर्घटना का भी लिया हुआ है। इसलिए दुगुना रुपया मिलेगा। समझीं
खवरदार, यह सारा रुपया पाकर घर-वार में कुछ मत लगाना। स

दो बैंकों में फ़िक्स्ड डिपॉजिट में रख देना। विधवा का काम उसी से चल जायेगा। समझी? बाल-बच्चों के पढ़ाने-लिखाने के काम में बेकार पैसा नष्ट करने न जाना। समझी?'

मीनू ने अत्यन्त आज्ञाकारिणी पतिव्रता की तरह सिर हिलाकर उत्तर दिया। उसके बाद चारों ओर आँख फाड़कर देखा, गरियाहाट पुल एकदम सूना हो गया था। एक खाली बस, जिस पर 'गैरेज' लिखा था, हड़हड़ाती हुई आयी और चली गयी। कोई-कोई माल ढोने वाली लॉरियाँ शोर मचाती इधर-उधर होती निकली जा रही थी। मीनू के मन में उठा कि खाते के पन्नों में अब तक बहुत-सी तसवीरें—बस, लॉरी, प्राइवेट, आदमी, टैक्सी—एक साथ खिंच रही हैं। किसने उसे रबड़ से मिटाकर इतनी देर में इस हालत में ला पटका है, जहाँ केवल मीनू, उसका पति, और वे लोग है। और कोई भी नही है।

इतनी देर मे मीनू को एक जरूरी बात याद आ गयी। झटपट बोल उठी, 'अब वे क़रीब-क़रीब आ ही पहुँचे है। हाँ जी, इतना किराया देकर इस घर में रह सकते हैं?'

वह बोला, 'देखो, असल काम तो भूल ही गया था। यह तो सरकारी मकान है। शची के नाम पर यह मकान लिया हुआ है। घर का आखिर तक ख़याल नही रहा। मुझसे कहा था—तू रहेगा, तो आखिर तक मत छोड़ना। इसी से हम उसमें चले गये। उसी के नाम से किराया है। उसके बाद पता तो है, हम में परस्पर बहुत-सी आपसदारी हो गयी। एक बार अलगाव भी हो गया था। लेकिन जानती हो मीनू, कलकत्ता मे जिगरी दोस्त भी छूटना बरदाश्त हो सकता है, लेकिन मकान नहीं छोड़ा जा सकता! इसीलिए शची को छोड़ देना पड़ा, शची का मकान नहीं छोड़ा। खबरदार! तुम यह मकान मत छोड़ना। गवर्नमेंट का मकान है, किराया देने का ज़िम्मा भले आदमी का नहीं रहता। तबीयत के मुताबिक़ बाक़ी लगाते रहेंगे। फिर मकान शची के नाम है। और जानती तो हो, उसका दिल बहुत कोमल है। उसके बाद आत्मग्लानि की छूत का रोग उन्हें हमेशा

लगा रहता है। हमें, माने तुमको इसका फ़ायदा पूरी तरह से उठाना होगा। जैसे : (एक) तुम बीच-बीच में शची के पास जाओगी, देखोगी कि वह तुम्हारी सहायता करने के लिए व्याकुल हो जायेगा, किन्तु मर्यादा के साथ और उसके दिल को बहुत चोट न पहुंचाकर तुम उसकी सहायता अस्वीकार कर दोगी; (दो) अपनी मुलाक़ात के वक़्त बातों-ही-बातों में अच्छे अन्दाज़ में उसे ऐसा इशारा दोगी कि जिससे वह समझ सके कि उसके प्रति दबा अभिमान कलेजे में लेकर ही मैं अकाल मारा गया। इससे शची के मन में आत्मग्लानि उत्पन्न करने का एक अनुकूल परिवेश तैयार हो जायेगा। शची प्रायश्चित-स्वरूप जीवन-भर तुम्हारा घर का बक़ाया किराया देकर आत्मग्लानि से छूटने का निरन्तर सुअवसर पाने को उत्सुक रहेगा। देखोगी कि वह क्रमशः स्वस्थ हो जायेगा। यह तो हुआ शची के स्वभाव का अच्छा पक्ष। फिर मालूम तो है कि मानव-समाज में केवल किसी के अच्छे पक्ष पर भरोसा रखने से ही ज़िन्दगी नहीं चलती। एक दिन शायद शची के इस अच्छे स्वभाव पर ही वितृष्णा जाग उठे! तुम्हारा बाक़ी मकान का किराया देने में उसे ऊब आ सकती है। तब ? उस ओर भी तुम्हें ध्यान रखना पड़ेगा। इसीलिए यज्ञेश्वर के साथ भी तुम्हें घनिष्ठता का नाता बनाये रखना पड़ेगा। तुम यज्ञेश्वर को 'यज्ञेश्वर देवर' बना लेना और उसके साथ तुम्हारे, यानी हमारे नाबालिग़ों के भविष्य को लेकर हमेशा चर्चा करना। इसमें यज्ञेश्वर का चूंकि अपना कोई दायित्व नहीं है, इसके कारण हैं; (एक) नाबालिग़ लोग अभी तक काफ़ी छोटे हैं; (दो) जो नकदी रक़म मैं मोटे तौर पर रखे जा रहा हूं, यज्ञेश्वर को मालूम है, कि उसके द्वारा उनका भरण-पोषण कर कुछ दिनों के लिए निर्वाह होगा। इसलिए वह हमारे नाबालिग़ों के भविष्य शीर्षक तत्व के प्रति सदा ही उत्साह के साथ काम करेगा। और शची अर्थात शची का बुरा पक्ष जिस क्षण सोचे कि यज्ञेश्वर तुम्हारे तथा हमारे नाबालिग़ों का पृष्ठ-पोषक है, उसी क्षण से वह (उसका बुरा पक्ष) अनावश्यक झमेलों से रिहाई पाने के महसूल के रूप में तुम्हारे बक़ाया किराये का भुगतान कर देगा। क्योंकि हाल का जनरल-मैनेजर शची उर्फ़, जी० एम०, किसी सामान्य कारण से यूनियन के नेता यज्ञेश्वर का विराग-भाजन होना

: ही न चाहेगा। याची तब अपने मन को हमेशा समझायेगा कि अपने स्वर्गीय (भूतपूर्व) मित्र के परिवार को अन्तःप्रेरणा से ही सहारा चला आया है—उसकी आत्मा महान और परमार्थी है—यह त्वना उसे स्वस्थ रखेगी। मानव-समाज में, मनुष्य-मनुष्य में, मीनू, ईचारे की भावना इसी तरह पैदा होती है! जो कोई इस तत्व को है, समाज उसकी ओर से कभी मुंह नहीं मोड़ता।'

शोक-यात्रा का विवरण

ी मृतदेह लेकर जुलूस चितरंजन एवेन्यू के मार्ग से विनय-बादल-दिनेश स्क्वायर पर मोहता इंडस्ट्रीज के मुख्य कार्यालय पर जब पहुँचा तो सारे प्रतिष्ठान में गहरे शोक की छाया व्याप्त हो गयी। मोहता इंडस्ट्रीज नामांकित डीजल से चलने वाली लॉरी फूलों की माला से सजायी गयी थी—उससे एक ऐसा अलौकिक रूप निकल आया था कि लग रहा था, जैसे अभी-अभी स्वर्ग से पुष्पक-रथ उतर आया हो! लॉरी पर एक नया पलंग फूल-मालाओं से विशेष रूप से शोभित हो रहा था। पलंग पर उजली चादर से आच्छादित उसका प्राणहीन, दिव्य शरीर रखा हुआ था। सहकर्मी लोगों ने आपस में थामकर उसकी निस्पन्द देह के साथ पलग उतार लिया; उसके बाद कुछ समय उसके शरीर को दफ्तर के हॉल में रखा गया। सारे विभागों के कर्मचारी हॉल में जमा होकर गम्भीर मुद्रा में उसे अन्तिम एक बार देख आये। प्रतिष्ठान के मैनेजिंग-डायरेक्टर, जनरल-मैनेजर, कर्मचारी-संगठन के प्रधान, अफसरों की परिषद् के सामान्य अध्यक्ष, चतुर्थ श्रेणी और सफाई-मजदूरों की कांग्रेस के अस्थायी सभापति की ओर से शव के ऊपर पुष्प-स्तवक और मालाएँ अर्पित की गयीं।

मृत के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के उद्देश्य से एक संक्षिप्त भाषण में वर्कर्स-यूनियन के प्रधान यज्ञेश्वर बाबू बोले, 'किसी भी राजनीतिक दल के साथ कोई सम्बन्ध न रखने पर भी हमारे स्वर्गीय सहकर्मी और घनिष्ठ मित्र अत्यन्त प्रगतिशील और समाज के प्रति जागरूक व्यक्ति थे। मार्क्सवाद के सम्बन्ध में ऐसा अगाध पांडित्य बहुत कम लोगों में मैंने देखा है।

उनके इस आकस्मिक निधन से हमने एक मित्र खो दिया, और हमारे संगठन ने एक सुधी परामर्शदाता और कर्मठ व्यक्ति को।' अफ़सरों की परिषद् के मुखिया बोले, 'हम यही जानते थे कि वह यूनियन के भी एक कार्यकर्ता थे। इसके सिवा हमारी बराबर यह धारणा रही कि वे केवल हमारे ही साथ थे। वे जिस प्रकार प्रचार की ओर से निष्पक्ष और उदार-चेता थे, यही उसका सर्वोत्तम प्रमाण है।' नये जनरल-मैनेजर—उन्होंने उसी दिन कार्यभार सँभाला था—इतने अभिभूत हो गये कि एक बात भी न कह सके। मैनेजिंग डायरेक्टर मोहता ने बताया कि 'इस प्रतिष्ठान में कोई भी अभी तक इस तरह नहीं मारा गया। इस कारण से हम सब ही एक बेचैनी से आक्रान्त हो रहे हैं। उन्होंने दधीचि की तरह अपना बलिदान देकर हम सबकी बेचैनी दूर की। उद्योग के मालिक आज के दिन की पूरी ही छुट्टी देना चाह रहे थे, लेकिन सब संगठनों ने एकमत होकर यही उचित माना कि आज आधे दिन की छुट्टी की घोषणा हो, और दूसरे किसी दिन को शहीद-दिवस के रूप में मनाकर ओवरटाइम काम किया जाये! ऐसा होने से मृतक के प्रति पूर्ण सम्मान व्यक्त होगा। मैनेजमेंट ने वह मंज़ूर कर लिया है।' उसकी मृतदेह फिर सुसज्जित लॉरी पर रखी गयी। इसके बाद केउड़ातला श्मशान में बिजली के दाह-गृह के महासमारोह से उसकी अन्त्येष्टि क्रिया सम्पन्न हुई। मृत्यु के समय वे अपनी पत्नी, पुत्र-पुत्री, पिता-माता, भाई-बहिन और कितने ही आत्मीय-मित्रों को छोड़ गये! श्मशान में उद्योग के प्रबन्धकों की ओर से उनके प्रति, उनके परिवार वालों के प्रति घोषणा की : स्वर्गीय के लिए प्राप्य सम्मान के रूप में ओवरटाइम बेनिफिट के साथ एक महीने का एक्स्ट्रा वेतन मंज़ूर हुआ है!

उसी रात क्या हुआ ?

पहले तरुण के आगे बढ़ते ही मीनू ने उसे प्रायः रोक रखा। उसने मीनू को क़रीब-क़रीब खींचकर हटा दिया।

लड़का अब उसके आमने-सामने खड़ा हो गया। उसके शरीर में एक ठंडी बिजली की-सी सिहरन दौड़ गयी।

लड़का बोला, 'दादा, दियासलाई है ?'

दियासलाई क्यों माँग रहा है ? ऐसी बात तो नहीं थी। पहले तो सिर पर डंडे की चोट पड़ेगी ! यही है न, मीनू ? दियासलाई क्यों माँग रहा है ? तो क्या यह कोई इशारा है ? पूर्वी बंगाल में नाव से नाव भिड़ाकर डाकू लोग जिस तरह कहते हैं, आग लग गयी है भाई।

लड़का फिर बोला, 'ओ दादा, सुन रहे हैं, दियासलाई है ?'
वह बोला, 'है।'
लड़का बोला, 'देंगे ?'

यह भी हो सकता है कि लड़का सचमुच दियासलाई ही चाहता हो। यज्ञेश्वर बोला, जानती हो, आजकल ऐसा हुआ है कि राह में चार छायाएँ इकट्ठी हुई हैं, यह देखकर ही नर्वस हो जाता हूँ। यज्ञेश्वर, जिसके अपने हाथ में ही पार्टी के असंख्य लड़के हैं, उसी ने एक दिन यह बात कही थी। हुंः !

उसने दियासलाई निकालकर लड़के के हाथ में दे दी।
लड़के ने सिगरेट सुलगायी। उसके बाद चिल्लाकर बोला, 'अरे, है भाई, है, आओ।'

मीनू के बदन में कम्पन शुरू हो गया।
अचानक नम्बर नौ की एक बस आ गयी।
वह बोला, 'मीनू, बस। अरे, रोक के !'
मीनू गला फाड़कर चीख उठी, 'रोक के !'
बस नहीं रुकी।

लड़का इन लोगों से बोला, 'बस तो इस पुल पर रुकती : दादा।'

ौर लड़का वढ़ आया। वोला, 'जव दियासलाई है तो क्या दो-
ेट नहीं हैं ?'
लड़का और वढ़ आया।
ानू चिल्ला उठी, 'ऐ ए टैक्सी ! टै-क्-सी !'
ह चिल्लाया, 'टै-क्-सी ! टै-क्-सी !'
टैक्सी घर्र से निकल गयी।

लड़का वोला, 'सिगरेट है, दादा ?'
वह वोला, 'सिगरेट ? हाँ, है।'
लड़का वोला, 'क्यों वे, कहा था न ?'
एक लड़का वोला, 'दादा, एक देंगे ?'
वह वोला, 'लीजिये न, पीजिये।'
उसने सिगरेट निकालकर दी।
लड़का वोला, 'कहाँ जायेंगे, दादा ?'
एक-दूसरे लड़के ने सिगरेट सुलगायी। वोला, 'क्यों वे, चलेगा नहीं ?'
वह वोला, 'चिड़िया मोड़।'
एक और लड़का आगे आया। वोला, 'कौन-सी सिगरेट है वे ?'
एक दूसरा वोला, 'चिड़िया मोड़ ?'
एक और वोला, 'चारमीनार !'
एक दूसरा वोला, 'चारमीनार ? धत् !'
एक और वोला, 'चिड़िया मोड़ जायेंगे ? इतनी रात को ? क्या वात
है ?'
एक और वोला, 'तो पीता क्यों नहीं ?'
वह वोला, 'वात कुछ नहीं है। हम वहाँ रहते हैं।'
एक और वोला, 'कहा कि नहीं पिऊँगा। दूर से दादा को वहुत
समझा था। सोचा था, कुछ अच्छा मिलेगा।'
एक और वोला, 'चिड़िया मोड़ पर रहते हैं ? तो यहाँ क्या क
हैं ?'
मीनू वोली, 'निमन्त्रण पर आये थे।'

एक और बोला, 'सब साले नवाब हैं! पता है, आजकल चारमीनार
-बड़े आदमी पीते हैं।'
एक और बोला, 'अरे, उसकी बात छोड़ो। बस हेकड़ी-ही-हेकड़ी है।'
एक और बोला, 'निमन्त्रण पर आये थे। उस चिड़िया मोड़ से यहाँ!'
एक और बोला, 'क्या शौक है, बाप रे बाप!'
दूसरा बोला, 'पागल हुआ है।'
एक और बोला, 'हिम्मत है, भाई।'
दूसरा बोला, 'छोड़ भाई, दादा के लिए एक चारमीनार छोड़ दे।'

मीनू बोली, 'अरे, वह टैक्सी। टैक्-सी!'
टैक्सी जरा धीमी भी नहीं हुई।

एक और बोला, 'यहाँ खड़े-खड़े टैक्सी-टैक्सी करने पर कोई रोकेगा?'
एक दूसरा बोला, 'इस पुल पर खड़े-खड़े दोनों अब तक क्या करते हैं ये?'
वह भौंचक्का होकर बोला, 'क्या कर रहे थे अब तक?'
एक और बोला, 'हाँ-हाँ इतनी देर से देख रहे हैं हम। एक बार लिंग पकड़कर झुक गये थे। एक बार दीदी को पकड़कर खींचतान कर थे।'
वह बड़े ताज्जुब में आकर बोला, 'हम?'

एक और बोला, 'टैक्सी, टैक्सी! अरे यहाँ खड़े चिल्ल-पों करने से कोई साला ड्राइवर न तो पुकार सुनेगा और न गाड़ी रोकेगा।'
एक और लड़का मीनू की आवाज की नकल करके चिल्लाया, 'टैक्-!'
एक दूसरा बोला, 'अबे साले चुप! हरामीपन करेगा तो एक थ रे का नक्शा बदल दूंगा।'
एक और बोला, 'एक बार आप रेलिंग पर जाकर झुके, दो रेलिंग पर जाकर झुकीं। हमने देखा। उनका मंशा क्या

हनने जो भरकर सांस ली। उसमें इतना [illegible]
बात है ?'

यह डर गया। मीनू को गुस्सा आ गया है। [illegible]
देखो। उसने पुकारा, 'मीनू, चुप रहो।'

मीनू बोली, 'क्यों चुप रहूँ, हम किसी का [illegible]
तुम उनका मुँह ताक रहे हो ? अच्छी तरह [illegible]
रहता तो आज इनके ही बराबर होता। [illegible]
चेहरे से मेरे बिलू का चेहरा मिलता है। [illegible]
हमारा बिलू अगर ज़िन्दा रहता, और इनके [illegible]
तरह बदतमीज़ी करता, तब चुप बैठे रहते ? [illegible]'

उसने जो सोचा वही हुआ। मीनू ने [illegible]
था। हम यहाँ ऊँची आवाज़ में बात करना [illegible]
आत्मसमर्पण करने की बात थी। [illegible]
का पानी कहाँ गिरे, कौन जाने। [illegible]
'हाय ईश्वर !'

गरियाहाट के पुल पर वे दोनों

एक लड़का भागा-भागा आया। वे लोग चिल्लाते हुए उसकी तरफ़ गे।

लड़का हाँफते-हाँफते बोला, 'अरे बाप रे, कैसा कंजूस, कहाँ छिपाकर रखा, साला ढूंढ़ने से नहीं मिला। तक़दीर से दो पैकेट शाम को अलग रख दिये थे। यह ले।'

वे लोग फिर शोर करने लगे। पैकेट खोलकर सबने एक-एक सिगरेट मुँह में लगायी। जलती हुई दियासलाई की तीली सबके मुह के आगे घूमने लगी। उसके बाद शोर मचाकर जाते-जाते वे एक जगह थमककर खड़े हो गये। उन लोगों ने एक टैक्सी को शोर कर घेर लिया था। चिल्ला रहे थे, दनादन अपना बदन पीट रहे थे।

सहसा एक लड़का भागा-भागा उनके पास आया। हाँफते-हाँफते बोला, 'आइये दीदी, आइये, एक साले को...माने एक टैक्सी पकड़ ली है।'

मीनू ने उसकी ओर देखा। उसने भी मीनू की ओर।

उसके बाद मीनू उससे बोली, 'तुम फिर हड़बड़ाकर भागना म बीमार आदमी। गिर-गिरा पड़ोगे!'

उपसंहार

मैं मीनू के इस तरह के उजबकपन का समर्थन बिलकुल न कर सका। लड़के हत्यारे नहीं हैं, गोकि हम पहले यह न समझ सके, इसीलिए भाग्य से बच गये। बिलकुल भाग्यवश! ये लोग खूनी नहीं हैं, लेकिन अगर होते! मीनू—कैसी मुश्किल है यह, उसे समझाना कठिन है। तर्क उसके दिमाग में बिलकुल नहीं बैठता। मीनू की धारणा है, अभी भी यही धारणा है कि कौन हत्यारा है और कौन हत्यारा नहीं है, यह शकल देखते ही समझ में आ जाता है। और तो सब बेकार बातें हैं। औरतों के लिए ही यह बात कहना सम्भव है। या, वह दूसरे युग की बात है। आज के कलकत्ता में ग्यारह बरस का लडका मुँह पर शिकन लाये बिना छुरी चला देता है। एक बार भी पलक नहीं झपकाता! पन्द्रह-सोलह वर्ष की किशोरी फन्दा डालकर शिकार फाँसती है; वर्ग के शत्रु के गले की नली दो टुकड़े कर देने के लिए जोश के साथ छुरी बढ़ा देती है! यहाँ कौन खूनी है और कौन खूनी नहीं है—यह शकल देखकर समझा जाये, ऐसा ही आसान है क्या? महाशय, मैं तर्कशास्त्र का अनुसरण करके चलता हूँ। इसीलिए आज के कलकत्ता में मेरे निकट सब खूनी हैं। हो सकता है, कोई खुद हत्या करे, और नहीं तो किसी-न-किसी तरह किसी दूसरे हत्यारे की सहायता करे।

इसी कारण से मैं सब पर सन्देह करता हूँ, सब पर। यहाँ तक कि अपने पर भी। और हमेशा होशियार रहता हूँ, क्यों कि यह बात तो सभी जानते हैं कि चमत्कार बार-बार नहीं दोहराये जाते!

□ □